UNIVERSAL LIBRARY

OU_180231

UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H891 P94K Accession No. G.H. 3172

Author अमृता प्रीतम

Title कवि-श्री मान्न पंजाबी १९६२

This book should be returned on or before the date last marked below.

कवि-श्री माला

* पञ्जाबी *

कवि :

अमृता प्रीतम

सम्पादक–अनुवादक

बलवन्त सिंह

भारत सरकार की ओर से भेंट

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

प्रकाशक :

मोहनलाल भट्ट
मन्त्री :
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,
हिन्दीनगर, वर्धा

● ● ●

सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रथम संस्करण—३०००
मई, १९६२
मूल्य–रु. २/-

● ● ●

मुद्रक :

मोहनलाल भट्ट
राष्ट्रभाषा प्रेस,
हिन्दीनगर, वर्धा

● ● ●

आमुख

हर्षका विषय है कि राष्ट्रभाषा-प्रचार-समिति, वर्धा अपने कार्य कालके २५ वर्ष सन् १९६१ में पूरे कर रही है। इस उपलक्ष्यमें मनाये जानेवाले रजत-जयन्ती महोत्सवके अवसर पर सभी भारतीय भाषाओंके मान्य कवियोंका तथा उनके उत्कृष्ट काव्यका परिचय 'कवि-श्री माला' की पच्चीस पुस्तकोंमें हिन्दी-गद्यानुवाद सहित प्रकाशित करनेकी योजनाके अन्तर्गत प्रस्तुत ग्रन्थ पाठकोंके समक्ष आ रहा है।

यद्यपि किसी भी भाषाके सर्वश्रेष्ठ काव्य-सर्जकका निश्चय करना एक कठिन कार्य है, फिर भी अपनी सीमाओंको ध्यानमें रखते हुए गण्यमान्य उन-उन भाषाओंके विद्वानोंकी रायसे ही चुनावका कार्य सम्पन्न किया गया है।

प्रत्येक पुस्तकके आरम्भमें जिस भाषाके कविकी रचनाओंका चयन किया गया है, उस भाषाके साहित्यका परिचय और कवि विशेषका परिचय दिया गया है। जिस भाषाके दो कवियोंका चुनाव किया गया है, उनका चुनाव करते समय सन् १९२० से पूर्वका साहित्य और १९२० से बादका साहित्य--इस तरहसे एक विभाजन-रेखा ध्यानमें रखी गई है। इसका कारण यह है कि लगभग सन् १९२० के पूर्वके तथा १९२० के बादके साहित्यमें प्रवाहित विचार-धारामें एक विशेष प्रकारका अलगाव-सा पाया जाता है।

श्री बलवन्त सिंहने प्रस्तुत पुस्तकमें संकलित साहित्यको चुनने, काव्यांशको सम्पादित तथा अनूदित कर सारी सामग्रीको इस रूपमें प्रस्तुत करनेमें सहयोग दिया है। संग्रहकी आवरण डिजाइनको बनवा देनेमें श्री व्ही. एन. अडारकरजी (डीन, सर जे. जे. इन्स्टीटचूट आफ अप्लाईड आर्ट, बम्बई) का उदार सहयोग मिला है, उसके लिए समिति सभीकी आभारी है।

इसके अतिरिक्त छपाई तथा अन्यान्य दृष्टियोंसे जिन-जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग मिला है, उनके प्रति भी समिति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है।

आशा है, प्रस्तुत संग्रह पाठकोंको रुचिकर एवं उपयोगी प्रतीत होगा।

मन्त्री,

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा

अनुक्रमणिका

पृष्ठांक

पञ्जाबी-साहित्य-परिचय [सन् १९२० से आज तक] १

कवि-परिचय १७

काव्य-सञ्चय ३५

कवि-श्री माला
पञ्जाबी

अमृता प्रीतम

पञ्जाबी साहित्य परिचय

[१९२० से आज तक]

पञ्जाबी भाषा
और
उसका साहित्य

• • •

[प्रारम्भ से सन् १९२० तक के पञ्जाबी साहित्यका सक्षिप्त परिचय 'कवि-श्री माला—भाई वीरसिंह' में दिया गया है।]

आधुनिक पञ्जाबी साहित्यको ठीक तरहसे समझनेके लिए इस समयसे पहले पञ्जाब की जो परिस्थिति थी उसे समझना बहुत आवश्यक है।

अँग्रेजोने भारतीय भूमिपर पाँव रखते ही हिन्दुस्तानियोंको एक दूसरेसे लड़ा-भिडाकर अपना राज्य स्थापित किया। पञ्जाब ही एक ऐसा राज्य था जिसपर अँग्रेजोने सबसे बादमें कब्जा किया। आपसी फूटके कारण सिख सेना ठीक तरहसे लड़ नही पाई और फिर हिन्दुस्तानी सिपाहियोकी बहुत बड़ी संख्या भी अँग्रेजोका साथ दे रही थी, जिससे सिखोंकी स्थिति और भी कमजोर हो गई। पूरे भारतपर कब्जा कर लेनेके बाद अँग्रेजोंने हिन्दुस्तानियोके मनमे यह बात बैठानी शुरू कर दी कि उनकी अपनी कला, साहित्य, सस्कृति आदि कोई चीज नही। और फिर उन्होने

इस बातका प्रचार भी किया कि यूरोपीय सभ्यता, साहित्य और कला बहुत उच्चकोटि की है। भारत इनके मुकाबलेमें बिल्कुल ही असभ्य और पिछड़ा हुआ देश है।

इस भावनाके विरुद्ध भारतमें ऐसी संस्थाएँ स्थापित हुईं, जिनका उद्देश्य यह था कि हिन्दुस्तानियोंको और ज्यादा गिरने से बचाया जाए। इस तरह की संस्थाएँ पञ्जाबमें भी स्थापित हुईं। इनमें एक 'नूंकारी सभा' भी थी। इसकी स्थापना करने वाले दयालदास नामके सज्जन थे जिनका जन्म सन् १७८३ ई. में हुआ था और १८५५ ई. में उनका देहान्त हो गया। इनका उद्देश्य पुराने सिख धर्मको फिर से विकसित करना था। इनकी मृत्युके बाद इनके दो बेटों—भाई दारा और रतनचन्दने पिताके कामको आगे बढ़ाया। यह सभा अँग्रेजोंके विरुद्ध तो न थी क्योंकि इसका लक्ष्य तो बिलकुल ही धार्मिक था, फिर भी इस सभाने पुराने सिख धर्मको उभारनेकी चेष्टा की।

सिख राज्यके अन्तिम समयमें एक और सभा स्थापित हुई। इस गुटके लोग 'नामधारी' या 'कूके' कहलाते थे। इसकी स्थापना करने वाले भगत जवाहरमल थे। सन् १८६२ ई. में इनकी मत्युके बाद बाबा बालक सिंहने अपने गुरुके विचारोंको दूर-दूर तक फैलाया। 'नामधारी' 'नूंकारियों'की तरह, अपने धर्म और सभ्यताको फिरसे जीवित करना चाहते थे, परन्तु धार्मिक क्षेत्रके साथ-साथ ये राजनैतिक क्षेत्रमे भी जा पहुँचे। बाबा बालक सिंहके बाद कूकोंने बाबा रामसिंहको अपना गुरु चुना। बाबा रामसिंहका जन्म १८१५ ई. में हुआ था। वे विदेशी सरकारके बहुत ही विरुद्ध थे। वे अहिंसावादी तो नहीं थे लेकिन उनके शिष्य लड़ने-भिड़नेसे भी बाज नहीं आते थे। अँग्रेजी सरकारने उनपर बहुत अत्याचार किये। यहाँ तक कि १८७२ ई. में जालन्धरके अँग्रेज डिप्टी कमिश्नरने लगभग ५० नामधारियोंको तोपके मुँहपर बाँधकर उड़वा दिया। अन्तमें बाबा रामसिंहको भी पकड़ लिया गया और उन्हें कैदी बनाकर रंगून भेज दिया गया, जहाँ वे तेरह वर्षके बाद सन् १८८५ ई. में स्वर्गवासी हो गए।

बाबा रामसिंहने नामधारियोंके लिए कई सिद्धान्त बनाए थे, उनमेंसे कुछ ये है :—

१. कोई 'नामधारी' अँग्रेज सरकारकी नौकरी न करे।

२. अपने बच्चोंको अँग्रेजी स्कूलोंमें न भेजे।

३. अँग्रेजोंकी बनाई हुई अदालतमें नामधारी अपने मुकदमें न लड़ें बल्कि अपने सभी झगड़ोंका फैसला पञ्चायत द्वारा ही करें।

४. विदेशी कपड़े या दूसरी विदेशी चीजोंका प्रयोग न करें।

५. विदेशी सरकारके डाकखानेका बहिष्कार करें (नामधारियोंने चिट्ठी-पत्री ले जानेका अलग से प्रबन्ध कर लिया था।)

बाबा रामसिंहके बाद बाबा हरीसिंह कूकोके गुरु बने, लेकिन अब इस सभाने राजनीतिसे अपने आपको बिलकुल अलग कर लिया और वह केवल धार्मिक कार्योंमें जुट गई।

अभी तक उपरलिखी दोनों सभाओंमेंसे किसीने भी साहित्यकी ओर ध्यान नहीं दिया था। सन् १८७३ ई. में 'सिंहसभा' की स्थापना हुई। पहले तो इसका उद्देश्य केवल धार्मिक ही था लेकिन धीरे-धीरे इस सभाके द्वारा समाज-सेवाका कार्य भी होने लगा और साहित्यकी रचना भी की गई। असली बात तो यह है कि आधुनिक पञ्जाबी साहित्यका आरम्भ, सिंह सभासे ही हो जाता है। इस सभाके सबसे बड़े साहित्यकार भाई वीरसिंह थे।

भाई वीरसिंहका जन्म सन् १८७२ ई. में हुआ। भाई वीरसिंहकी रचनाओं को समझनेके लिए उस समयकी सामाजिक और राजनैतिक दशाको अपने सम्मुख रखना आवश्यक है। उनकी लिखी हुई पुस्तकें घर-घरमें पहुँचीं। उन्होंने अपने धर्म और अपनी सभ्यताकी महानता बताई। उनके सुप्रसिद्ध उपन्यास हैं, 'बाबा नौधसिंह', 'सुन्दरी', 'विजय सिंह' और 'सतवन्त कौर'। इन उपन्यासोंमें सिखोंकी बहादुरी और उनके ऊँचे चरित्रका वर्णन किया गया है। उस जमानेमें ये उपन्यास बड़ी उत्सुकतासे पढ़े गए, लेकिन आजके पाठकको ये बिल्कुल नीरस लगते हैं।

फिर भाई वीरसिंहने स्वयं ही उपन्यास लिखने छोड़ दिये और उन्होंने अपनी एक साप्ताहिक पत्रिका 'खालसा समाचार' चलाई। इस पत्रिकामें और 'खालसा ट्रैक्ट सोसाइटी' के द्वारा छपी पुस्तिकाओंमें वे 'गुरुग्रन्थ साहब' की वाणीकी व्याख्याएँ छापते रहे। उन्होंने एक लम्बी अतुकान्त कविता भी लिखी जो 'राणा सूरत सिंह' के नामसे सन् १९०५ ई. में छपी। इसका विषय भी धार्मिक था। उन्होंने सिख गुरुओके जीवन-चरित्र भी लिखे। उन्होंने पहले और अन्तिम गुरु श्री गोविन्द सिंहकी जीवनी 'कलघीधर चमत्कार' के नामसे लिखी, फिर दूसरी जीवनी सबसे पहले गुरुकी लिखी जिसका नाम था 'गुरु नानक चमत्कार'। साथ ही साथ छोटी-छोटी कविताएँ भी लिखते रहे और इन कविताओके कुछ संग्रह भी छापे।

भाई वीरसिंहके साहित्यकी जाँच-पड़ताल तो होती ही रहेगी—उनके बारेमें आलोचकोके अलग-अलग विचार हैं, लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि वे अपने समयके उच्च कोटिके विद्वान् और लेखक थे।

सन् १९२० ई. के कुछ इधर या उधर कृपासागरने सर वाल्टर स्काटकी लम्बी कविता 'दि लेडी आफ दि लेक' का पञ्जाबीमें अनुवाद किया। परन्तु कृपा-सागरने अपनी कविताका वातावरण बिलकुल पञ्जाबी और इसके पात्र सिख रखे। यह कविता बहुत ही ठेठ पञ्जाबी भाषामें लिखी गई।

सन् १९२० के बाद प्रगतिशील साहित्यको ही पर्याप्त महत्व प्राप्त हुआ। इस साहित्यका सम्बन्ध 'किरती किसान' (कम्युनिस्ट) आन्दोलनसे है। हीरासिंह 'दर्द,' जो फुलवाड़ीके सम्पादक भी रहे, उनका सम्बन्ध न केवल अकालियोंसे बल्कि कम्युनिस्ट पार्टीसे भी था। इसी तरहसे सोहनसिंह 'जोश' भी कम्युनिस्ट पार्टी की साप्ताहिक पत्रिका 'जंगे-आजादी' में लिखा करते थे। लेकिन सबसे मशहूर

नाम गुरुबख्श सिंह का है। इन्होंने जब लिखना शुरू किया तब इनके मनपर अमरीकी सभ्यता और रहन-सहनका गहरा रंग छाया हुआ था, लेकिन अब ये कम्युनिज्मको ही मानते हैं।

गुरुबख्श सिंहने अमेरिकामें इन्जीनियरिंगकी परीक्षा पास की। भारत लौटनेपर उनके मनमें यह भावना उठी कि पञ्जाबके लोगोंको अमेरिकाकी सभ्यता से परिचित कराएँ और उनमें नवीन विचारोंको फैलाएँ। परिणामतः उन्होंने इञ्जीनियर बननेके बजाय लिखना शुरू कर दिया। उन्होंने अपनी मासिक पत्रिका 'प्रीत लड़ी' निकालनी शुरू की, जिसके सम्पादक भी वे स्वयं ही थे। कुछ ही समयमें 'प्रीत लड़ी' चल निकली। शायद ही पञ्जाबीकी किसी अन्य पत्रिकाको लोगोंने इतनी उत्सुकतासे पढ़ा हो। उन्होंने लाहौर और अमृतसरके बीचमें 'प्रीत-नगर' नामका एक नगर बसाया। वहाँ उन्होंने कई प्रकारकी योजनाएँ चलाईं। गुरुबख्श सिंहने अज्ञान और पुराने रिवाजोंके विरुद्ध एक जोरदार आन्दोलन चलाया। वे कवि तो नहीं, लेकिन एक बड़े अच्छे उपन्यासकार और कहानीकार माने जाते हैं। सामाजिक समस्याओंपर तो उनके लेख बहुत ही अच्छे हैं। जहाँ तक भाषाका सम्बन्ध है, वे आधुनिक पञ्जाबी भाषाके जनक कहे जा सकते है। जिन लोगोंको उनके विचार पसन्द नहीं हैं या जो उनके विचारोंके बिलकुल विरुद्ध हैं, वे भी अिस बातको तो मानते ही हैं कि गुरुबख्श सिंहने पञ्जाबी भाषाको बहुत अच्छी तरहसे सजाया और सँवारा है।

उनके सुपुत्र नवतेज सिंहने भी कुछ अच्छी कहानियाँ लिखी हैं, ये दोनों पिता-पुत्र चीन, रूस और पूर्वी यूरोपकी यात्रा भी कर आये हैं।

गद्यके क्षेत्रमें जहाँ गुरुबख्श सिंहका नाम सुप्रसिद्ध है वहाँ कविताके क्षेत्रमें मोहन सिंहका नाम बहुत ऊँचा है। मोहन सिंहका काव्य बहुत उच्च कोटिका है। उन्होंने कई प्रकारसे पञ्जाबी भाषाकी सेवा की है। मशहूर पञ्जाबी साहित्यिक पत्रिका 'पंज दरिया' के वे सम्पादक रहे हैं।

कहानी :

पञ्जाबीमें कहानी लिखनेपर अधिक जोर दिया गया है। यों तो भाई वीरसिंह, भाई मोहनसिंह वैद और चरणसिंह 'शहीद' ने पहले कहानियाँ लिखी थीं। 'सिंह सभा' और 'अकाली' पार्टीने भी कई लेखकोंको जन्म दिया था। लेकिन असली मानेमें आधुनिक पञ्जाबी कहानीका आरम्भ सन् १९३० के बाद ही हुआ।

यद्यपि नानकसिंह, प्रधानतः उपन्यासकार हैं लेकिन उन्होंने कहानियाँ भी लिखीं हैं और उनकी कहानियोंका पहला संग्रह 'हंजुआं दे हार' सन् १९३४ में छपा। फिर सन् १९३८ में गुरुबख्श सिंहकी कहानियोंका पहला संग्रह पाठकोंके सामने आया। पञ्जाबी कहानीपर पश्चिमी देशोंके साहित्यका काफी गहरा प्रभाव

पड़ा हैं। धीरे-धीरे पञ्जाबी कहानियाँ हर तरहसे समृद्ध होती गईं। सबसे पहले सन्त सिंह सेखोंने बिलकुल नये ढंगकी कहानियाँ लिखनी शुरू कीं। उनका सन् १९४३ ई. में छपा पहला संग्रह बहुत अधिक पसन्द किया गया। उस समयसे अब तक आपके बहुतसे संग्रह छप चुके हैं। आपने पहले-पहल अँग्रेजीमें लिखना शुरू किया, लेकिन फिर अपनी मातृभाषा पञ्जाबीमें लिखने लगे। आप सबसे अधिक जोर कहानीकी कथा-वस्तुपर देते हैं। आप पूंजीपतियोंके बहुत ही विरुद्ध हैं। भारतीय समाजमें धर्मके ठेकेदार जो गन्दगी फैलाते रहे हैं, आप अुसे भी बिलकुल पसन्द नहीं करते। आप 'साइंटिफिक सोशलिज्म'को मानते है और मनुष्यके लिए इसी ढंगके जीवनको पसन्द करते हैं। इसी प्रकारके विचार आप अपनी कहानियोंके द्वारा अभिव्यक्त करते हैं।

सन्तसिंह सेखोंकी कहानियोंपर 'सोशलिज्म' का गहरा प्रभाव पड़ा है। जहाँ तक समाज-सुधारका सम्बन्ध है, यह काम नानक सिंहने पहले ही शुरू कर दिया था। नानक सिंहने १९२९ ई. में लिखना आरम्भ किया। उनकी कहानियोंमें आर्थिक समस्याओंकी झलक तो दिखाई देती है, लेकिन उन्हें राजनीतिसे कोई दिल-चस्पी नहीं। उनके यहाँ सिर्फ सिख धर्मका प्रभाव ही दिखाई देता है।

गुरुबख्श सिंहको हम आदर्शवादी लेखक कह सकते हैं। उनकी भाषा और शैलीमें एक जादू है, फिर भी उनके पात्र कभी-कभी जीते-जागते इन्सान नहीं, बल्कि कठपुतलियों-से लगते हैं। गुरुबख्श सिंहके मनमें पहले एक समस्या उत्पन्न होती है और फिर उसके इर्द-गिर्द वे अपनी कहानीका जाल बुनने लगते हैं। ऐसा लगता है कि मानो किसी उद्देश्यको मनवानेके लिए ही कहानी लिखते हैं। उन्होंने पञ्जाबके बँटवारे पर भी कुछ कहानियाँ लिखीं हैं। चाहे वे किसी भी विषय पर लिखें, लेकिन हर स्थान पर साधारण मानव या जनसाधारणके प्रति उनके मनका प्रेम झलक उठता है।

इनके बाद करतारसिंह दुग्गलका नाम आता है। पञ्जाबीमें शायद किसी कहानीकारने भी इतनी कहानियाँ नहीं लिखीं जितनी कि करतारसिंह दुग्गलने लिखी हैं। दुग्गलपर भी पश्चिमी कहानी-साहित्यका गहरा प्रभाव पड़ा है। वे 'कला कलाके लिए' में विश्वास करते हैं। उन पर प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रायडके विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। उनकी अधिकतर कहानियाँ स्त्री-पुरुष भेद पर ही हैं, क्योंकि फ्रायडने भी अपने मनोविज्ञानके सिद्धान्तका महल इन्हीं बुनियादोंपर खड़ा किया था। दुग्गलके साहित्यमें परिपक्वताकी कमी महसूस होती है। फिर भी दुग्गलकी कुछ कहानियाँ बहुत अच्छी बन पड़ी हैं। पञ्जाबके बँटवारेपर आपने भी कहानियाँ लिखी हैं, लेकिन यहाँ भी उनका दृष्टिकोण बहुत सुलझा हुआ नजर नहीं आता। उनके पात्र कुछ अजीब-से लगते हैं। वे जाने-पहचाने नहीं, बल्कि असामान्यसे प्रतीत होते हैं।

इन कहानीकारोंके पश्चात् जो बहुत अच्छे नाम दिमागमें उभरते हैं, वे हैं—सन्तोख सिंह 'धीर', महेन्दर सिंह सरना, कुलवन्त सिंह 'विर्क' और अमृता प्रीतम।

सन्तोख सिंह 'धीर' उच्चकोटिके कहानीकार हैं। वे बँटवारेके बादवाले पञ्जाबसे भलीभाँति परिचित हैं और वे वहाँके देहातोंकी समस्याओंको अच्छी तरह समझते हैं। और उनसे इनकी गहरी सहानुभूति भी है। 'धीर' कहानी बड़ी मेहनतसे लिखते हैं। वे पञ्जाबीके जीते-जागते चित्र एवं चरित्र हमारे सामने प्रस्तुत करते हैं। कम्युनिज्मकी ओर उनका झुकाव है और वे बड़े आशावादी लेखक हैं। उन्हें मनुष्यकी मनुष्यतापर पूरा भरोसा है और वे मनुष्यके भविष्यको भी उज्ज्वल मानते हैं। धर्म और धर्मके ठेकेदारोंसे अुन्हें कोई हमदर्दी नहीं, बल्कि इसे मनुष्यकी प्रगतिके मार्गमें एक बड़ी रुकावट समझते हैं। सीधे-सादे किसानों, मजदूरों और मेहनत करके पेट पालनेवाले पात्रोंसे उनकी गहरी सहानुभूति दिखाई देती है।

महेन्दर सिंह सरनाने सन् १९५० से कुछ पहले कहानियाँ लिखनी प्रारम्भ कीं, लेकिन १९५० तक उनकी कहानियोंका एक संग्रह पाठकोंके सामने आ चुका था। आप भी कहानी लिखनेकी कला पर काफी अधिकार रखते हैं। आपकी कहानियाँ काल्पनिक और शायराना-सी हैं, लेकिन आप भी मनोविज्ञानका अपने कहानियोंमें काफी प्रयोग करते हैं। आपकी शैली बड़ी रंगीन और सुन्दर है। कहानीमें सुन्दर शब्दावलीका प्रयोग करते हैं। कुलवन्त सिंह 'विर्क' की कहानियोंका पहला संग्रह सन् १९५० में छप चुका था। 'विर्क' पर 'सेखों' का गहरा प्रभाव पड़ा है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रसिद्ध अँग्रेज कहानीकार 'सामरसेट माम' का भी आपपर गहरा प्रभाव पड़ा है। सन् १९५० से अब तक आपकी कहानियोंके करीब चार संग्रह छप चुके हैं। आपने समाज सुधारको अपना उद्देश्य नहीं माना और न आप आदर्शवादी ही हैं, बल्कि आपका मार्ग इन दोनोंसे कुछ हटकर ही है। मालूम होता है कि स्त्री पुरुष भेदका विषय आपको भी बहुत प्रिय है क्योंकि दुग्गलकी तरह आपने भी इस विषयपर कई कहानियाँ लिखी हैं।

कवयित्री होनेके बावजूद भी अमृता प्रीतम अच्छी कहानियाँ लिख सकती हैं। निश्चय ही वे शायराना अन्दाज़में लिखती हैं, लेकिन वे समस्याएँ, जिनपर वे लिखती हैं, शायराना नहीं होतीं। फिर भी पढ़नेवालेको महसूस होता है कि जरूरतसे अधिक भावुक हो जाती हैं। किन्हीं-किन्हीं कहानियोंमें तो यह भावुकता भली मालूम होती है, लेकिन कुछ कहानियोंमें खटक जाती है। पिछले चन्द वर्षोंमें अमृताने जो कहानियाँ लिखीं, उनके पढ़नेसे लगता है कि अमृता आदर्शवादी विचारधारा रखती हैं और समाजका सुधार करना चाहती हैं। कविताओंकी तरह कहानियोंमें भी वे समाजके विरुद्ध बगावत करती दिखाई देती हैं। वे समाजके बन्धनोंको तोड़ फेंकना चाहती हैं।

सुरिन्दर सिंह नरूला और गुरुमुखसिंह मुसाफिरने भी पञ्जाबीमें कहानियाँ लिखी हैं। इन दोनों सज्जनोंकी राजनीतिसे अधिक दिलचस्पी रही है। इसीलिए हम यह अनुभव करते हैं कि अगर नरूला का मन अपने राजनैतिक विचारोंसे अधिक जकड़ा हुआ न होता तो वे कहानियोंकी ओर जरा खुले ढंगसे ध्यान दे सकते। गुरुमुख सिंह मुसाफिर देशकी स्वतन्त्रताके लिए कई आन्दोलनोंमें भाग लेते रहे और उनके जीवनके कई वर्ष जेलमें ही कटे। इसीलिए उनकी अधिकतर कहानियाँ बन्दी जीवनका वर्णन करती हैं।

जो महिलाएँ पञ्जाबी भाषामें कहानियाँ लिख रही हैं उनमेंसे अमृता प्रीतम का जिक्र हो चुका है, लेकिन इनके अतिरिक्त भी कुछ महिलाओंने बहुत अच्छी कहानियाँ लिखी हैं, जैसे:—प्रभजोत कौर, दलीप कौर टिवाना और हरिन्दर कौर ग्रेवाल। उन्होंने अधिकतर स्त्रियोंकी समस्याओंके बारेमें ही लिखा है। इनसे इस बातकी आशा की जा सकती है कि ये भविष्यमें बहुत अच्छी कहानियाँ लिख सकेंगी।

एकदम नए खेमेके लिखनेवालोंमें लोचन बख्शी, अमरसिंह, देवेन्दर उप्पल, जसवन्त सिंह कमल, सतनामसिंह पाँधी, करतार सिंह सूरी, हरीसिंह दिलबर आदि प्रमुख है। गार्गीने भी अच्छी कहानियाँ लिखी हैं, लेकिन उनका स्थान नाटक-साहित्यमें ही अग्रणी है। आज सुरजीत सिंह सेठीके भी अच्छी कहानियोंके नमूने मिलते हैं।

पञ्जाबी साहित्यमें कहानीकी ओर काफी ध्यान दिया गया है। इसी सम्बन्धमें देवेन्द्र सत्यार्थीका नाम भी लिया जा सकता है। लेकिन मैंने सत्यार्थीका कहानीकारोंमें इसलिए जिक्र नहीं किया, कि वे केवल कहानीकार ही नहीं हैं, वरन् उन्होंने पञ्जाबी साहित्यको बहुत कुछ दिया है। उनका सबसे महत्वपूर्ण काम यह है कि उन्होंने पञ्जाबी लोकगीत और पञ्जाबी लोकनृत्य कलापर खूब लिखा है। इसमें उन्होंने बहुत परिश्रमपूर्वक काम किया है। उन्होंने पञ्जाबी लोक-गीतों और लोक-नृत्योंके बारेमें केवल पञ्जाबी भाषामें ही नहीं लिखा, बल्कि उन्होंने दूसरी भाषाओंमें भी इन चीजोंको प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियोंका अपना ही एक रंग और अपनी ही एक खुशबू है। . . . . . और वह खुशबू पञ्जाबकी भूमिकी है।

पञ्जाबके लेखकोंने कहानीकी ओर काफी ध्यान दिया है। कहानी पढ़ने और लिखनेका शौक पञ्जाबमें बढ़ता ही जा रहा है। हर साल कोई न कोई कहानीकार मैदानमें आ जाता है। चूँकि पञ्जाबीके सभी नए कहानीकार अभी जीवित हैं और उनमेंसे, बहुतसे ज्यादा उम्रके भी नहीं है। इसलिए आशा की जा सकती है कि पञ्जाबी कहानी अभी काफी फूले फलेगी। यह जानकर और उत्साह बढ़ता है कि पञ्जाबी कहानीने लगभग पिछले बीस वर्षमें इतनी अधिक प्रगति कर ली है! करीब डेढ़ सौ कहानीकार कहानियाँ लिख रहे हैं और अब तक साढ़े तीन सौ के लगभग कहानियोंके संग्रह छप चुके हैं। पुस्तकोंके रूपमें कई

हजार कहानियाँ छप चुकी हैं। यह सब कुछ देखते हुए हम कह सकते हैं कि पञ्जाबी कहानीका भविष्य उज्ज्वल है।

कई पञ्जाबी लेखक ऐसे भी हैं जो पञ्जाबीमें न लिखकर दूसरी भाषाओंमें लिख रहे हैं और उन्होंने बहुत नाम भी पैदा किया है। डॉक्टर मुल्कराज आनन्दने अँग्रेजीमें कई उपन्यास लिखे हैं। कृशन चन्दर (कृष्णचन्द्र एम. ए.) उर्दूमें कहानियाँ और उपन्यास लिखते हैं। राजेन्दर सिंह बेदी, रामानन्द सागर, महेन्द्रनाथ आदि ऐसे कहानीकार हैं, जो केवल उर्दूमें ही लिखते हैं। हिन्दीके सुप्रसिद्ध कहानीकार और उपन्यासकार यशपाल भी केवल हिन्दी में ही लिखते हैं। उपेन्द्रनाथ 'अश्क' जो पहले उर्दूमें कहानियाँ और नाटक लिखा करते थे, अब कई वर्षसे हिन्दीमें ही लिख रहे हैं। अपनी कहानियों, कविताओं, नाटकों और उपन्यासोंके कारण हिन्दीमें शायद प्रेमचन्दके बाद इन्हींको इतना यश मिला है। मैंने भी पञ्जाबी होते हुए पञ्जाबीमें कभी नहीं लिखा, बल्कि उर्दूमें ही लिखना शुरू किया। जब तक उर्दूके क्षेत्रमें रहा, तब तक केवल कहानियाँ ही लिखता रहा। आजसे बारह-तेरह साल पहले जब हिन्दीमें लिखना शुरू किया, तो मेरे सभी उपन्यास हिन्दीमें ही लिखे गए।

वे पञ्जाबी लेखक, जो दूसरी भाषाओंमें लिख रहे हैं, यदि पञ्जाबीमें ही लिखते तो निश्चय ही पञ्जाबी साहित्य आज और ऊँचा उठ गया होता, क्योंकि इनमेंसे कई उच्च कोटिके लेखक हैं।

उपन्यास :

पञ्जाबीमें उपन्यास बहुत कम लिखे गए हैं। अच्छे उपन्यासकारोंकी संख्या इतनी कम हैं कि वह सरलतापूर्वक उँगलियोंपर गिनी जा सकती है....और फिर जो उपन्यास लिखे गए हैं वे भी बहुत उच्च कोटिके नहीं हैं। पञ्जाबी कहानियों में कुछ ऐसी कहानियाँ मिल जाएँगी, जिन्हें हम दुनियाकी किसी भी भाषाकी अच्छी कहानियोंके मुकाबलेमें रख सकते हैं। उपन्यासके बारेमें यह कह सकना कठिन है।

नानक सिंह पिछले तीस-बत्तीस वर्षसे पञ्जाबीमें उपन्यास लिख रहे हैं और इस समय तक उनके उपन्यासोंकी संख्या तीससे ऊपर तक पहुँच चुकी है।

नानक सिंहके उपन्यासोंमें आमतौरपर समाजकी ही कोई समस्या होती है। उपन्यासके बीच-बीचमें इश्क व मुहब्बतका भी ताना-बाना आ जाता है। सिख धर्मके सिद्धान्तोंको लेकर भी उन्होंने कुछ उपन्यास लिखे हैं। जहाँ तक इनकी भाषाका सम्बन्ध है इसे भी बहुत कुछ सँवारा जा सकता है, क्योंकि भाषाकी ओर आप अधिक ध्यान नहीं देते। आपके उपन्यासोंकी 'टेकनीक' सरल और सीधी-सादी होती है। विचार-धारा और कहानी कहनेका आपका ढंग ऐसा है जो आमतौरपर जवानोंको पसंद आता है। आपके उपन्यासोंको युवक और युवतियाँ काफी दिलचस्पीसे पढ़ती हैं,

लेकिन उनके यहाँ परिपक्वताकी कमी महसूस होती है। कठिनाई तो यह है कि उनके बाद उनसे भी अच्छा उपन्यासकार पञ्जाबी साहित्यके क्षेत्रमें आना चाहिए था, लेकिन ऐसा हुआ नहीं। इसीलिए यह मानना पड़ेगा कि पञ्जाबी साहित्यमें उपन्यासोंकी बहुत बड़ी कमी है।

पञ्जाबी साहित्यमें नानक सिहके बाद थोड़े बहुत उपन्यास अवश्य लिखे गए हैं, जिनका जिक्र मैं नीचे करूँगा; परन्तु जरूरत तो इस बातकी है कि पञ्जाबीके लेखक उपन्यासकी ओर ज्यादा ध्यान दें।

कर्नल नरेन्द्रपाल सिंहने एक उपन्यास लिखा है, जिसका नाम है 'अमन दे राह'। इसमें एक फौजी सिपाही की कहानी बताई गई है जो बर्माकी लड़ाईमें भाग लेता है। वहाँ वह बुरी तरह घायल होता है, लेकिन उसकी जान बच जाती है। जब वह पञ्जाब लौटता है तो वहाँके लोगोंको यह समझानेका प्रयत्न करता है कि युद्ध कितनी बुरी चीज है और इस समय संसारको शान्तिकी कितनी आवश्यकता है!

इन्हींके लिखे हुए एक और उपन्यास का नाम है 'त्रिया जाल'। यह एक स्त्रीकी जीवन-कथा है। बचपनसे लेकर अधेड़ उम्र तक उस स्त्रीको समाजके बनाये हुए बन्धनोंसे कैसे मुकाबला करना पड़ता है। अपने आपको शिक्षा दिलाने और फिर शिक्षा पाकर स्वतन्त्रत रूपमें अपना पेट पालनेके लिए वह क्या-क्या करती है..... किस तरह हमारे समाजमें औरत लाचार और मजबूर बनाई जाती है। यही है इस उपन्यासका विषय।

जसवन्त सिंह कमलका उपन्यास 'रूप धारा' भी अच्छा बन पड़ा है। इसमें एक ऐसी देहाती लड़की की कहानी है जिसके बचपनमें ही माता-पिता मर जाते हैं और उसकी चाची जो एक मामूली सरकारी कर्मचारीकी स्त्री है, उसका पालन-पोषण करती है। लड़की बड़ी होकर अध्यापिका बन जाती है। दुनियाँ उस पर शक करती है। यहाँतक कि उसका प्रेमी पति भी उसे चरित्रहीन समझने लगता है लेकिन अन्तमें जीत उस लड़कीकी होती है।

सुरेन्द्र सिंह नरूलाका उपन्यास 'दिल दरिया' भी अपने ढंगका अच्छा उपन्यास है। इसमें एक कलाकार और उसके साथ सम्बन्ध रखने वाली चार स्त्रियोंकी कहानी है।

सुरजीत सिंह सेठीने 'कण्डे उत्ते रुखड़ा' एक उपन्यास लिखा है जो अपने अन्दाजमें अच्छा है।

'वंडया घर' एक ऐसा उपन्यास है, जिसमें पञ्जाबके बँटवारेसे पहलेके एक परिवारका चित्र खींचा गया है और बताया गया है कि कैसे बँटवारेके साथ ही वह परिवार भी बिखर गया। इस उपन्यासको जुगिन्दर सिंह जोगी और उनकी धर्मपत्नी हरिन्दर ग्रेवाल ने मिलकर लिखा है।

महेन्द्र सिह सरनाका उपन्यास 'काँगाँ ते कंढे' भी एक सुन्दर रचना है। हरनाम दास सहराईने एक ऐतिहासिक उपन्यास 'लोहगढ़' लिखा है। पञ्जाबमें सिख राज स्थापित होनेसे पहले और दसवें गुरुके फौरन बाद सिखोंमें एक बड़े शूर वीर हुए थे जिनका नाम बन्दा बहादुर था। इस उपन्यास में इसी वीरके जीवनका वर्णन है। हरनाम दास सहराईका एक और उपन्यास है जिसका नाम 'सफेद पोश' है। पाठकोंने इसे काफी पसन्द किया है। इस उपन्यासमें बताया गया है कि कुछ लोग नेता बननेके लिए कैसे-कैसे हथकण्डे अपनाते हैं। बाहरसे इनका रूप कुछ और होता है और अन्दर से कुछ और। हमारे समाजके एक पहलूपर यह एक अच्छा व्यंग्य है।

जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूँ कि पञ्जाबी साहित्यमें अच्छे उपन्यासोंकी कमी बहुत खटकती है। यद्यपि उपन्यास लिखनेमें भी अमृता खासी सफल नजर आती हैं, फिर भी यह तो कहना ही पड़ेगा कि नये पञ्जाबी साहित्यमें एक भी महत्वपूर्ण उपन्यास नहीं है।

नाटक :

पञ्जाबीमें नाटकोंकी भी बहुत कमी रही है। पञ्जाबके देहातमें भाँड़ और बहुरूपिये छोटी-मोटी नकलें दिखाकर लोगोंको हँसाते थे जिससे उनका मनोरञ्जन हो जाता था। पञ्जाबमें नाटकोंकी परम्परा पुरानी नहीं है।

पञ्जाबी नाटकका आरम्भ आजसे करीब पचास साल पहले लाहौरमें हुआ। इसका आरम्भ करनेवाली एक अँग्रेज महिला थीं, जिनका नाम नोरा रिचर्ड्स था। सन् १९१३ में दयाल सिंह कालेजमें 'दुलहन' नामक पहला पञ्जाबी नाटक खेला गया। इसे ईश्वरचन्द नन्दाने लिखा था। नोरा रिचर्ड्ससे ही ईश्वरचन्द नन्दाको पञ्जाबीमें नाटक लिखनेकी प्रेरणा मिली। नन्दाका नाटक लिखनेका शौक इतना बढ़ा कि उन्होंने और भी कई नाटक लिखे। सन् १९२० में इन्हीं का एक 'सुभद्रा' नामक नाटक काफी मशहूर हुआ। उन्होंने उस नाटकमें विधवा-विवाहके औचित्यका प्रतिपादन किया था। उस समय यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक समस्या थी।

'सुभद्रा'के बाद १९३० में नन्दाका एक और नाटक बहुत पसन्द किया गया, जिसका नाम था 'लीलाका ब्याह'। इस नाटकमें दहेजकी समस्या उठाई गई थी और बताया गया था कि दहेजसे लोगोंको कितनी हानि होती है। नन्दाने और भी कई नाटक लिखे, जैसे :—'शामू शाह', 'सोशल सर्कल'। उन्होंने 'झिलकारे' एवं 'लिश्कारे' आदि एकांकी नाटक भी लिखे हैं।

नन्दाकी भाषा काफी जोरदार है। उनके नाटकोंमें वास्तविकता है और है सामाजिक बुराइयोंके विरुद्ध एक तीव्र भावना। उन्होंने गाँव-गाँव घूमकर अपने नाटकोंको खेला और इस बातका सेहरा उन्हींके सिर है कि उन्होंने नाटकोंको लोकप्रिय बनानेके लिए काफी मेहनत की।

१९३० के बाद पञ्जाबी नाटकोंमें हमें आधुनिक मनोविज्ञानका गहरा प्रभाव दिखाई देने लगता है। इन्हीं दिनों सन्तसिंह सेखोंने नाटक लिखने आरम्भ किए। उन्होंने काफी संख्यामें नाटक लिखे। वे नाटक यद्यपि अच्छे कहे जा सकते हैं, लेकिन उनके चरित्र अच्छी तरह उभर नहीं पाए। सेखोंजी एक विचारको लेकर उसपर नाटकका ताना-बाना बुनते हैं। वार्तालाप भी सरल नहीं हैं।

सन् १९४० के बाद फज़लदीन और रफी पीरने भी कुछ नाटक लिखे। पञ्जाबके बँटवारेके बाद दोनों सज्जन पाकिस्तानमें रह गए। फज़लदीनका एक नाटक 'पिण्ड दे वैरी' काफी प्रसिद्ध है। इस नाटकमें ऋण, शराब आदिकी बुराइयाँ बताई गई हैं। रफी पीरपर पश्चिमका प्रभाव झलकता है। उनके दो नाटक 'अँखियाँ' और 'वैरी' काफी लोकप्रिय हुए।

हरचरन सिंहने बहुत-से नाटक लिखे हैं। वह पिछले लगभग पन्द्रह वर्षोंसे नाटक लिख रहे हैं। अपने नाटकोंमें वे अधिकतर देहाती जीवनका चित्र उपस्थित करते हैं।

करतार सिंह दुग्गलने भी नाटक लिखे हैं, लेकिन नाटक लिखनेमें उन्हें इतनी सफलता नहीं मिली जितनी कि कहानियाँ लिखनेमें।

सन् १९५० में गुरुदयाल खोसलाने 'पञ्जाबी थियेटर'की नींव रखी। यहाँ उन्होंने अपने नाटक अभिनीत किए। इनमें 'बूहे बैठी धी' और 'जुतियाँ दा जोड़ा' अधिक प्रसिद्ध हैं। उन्होंने ब्रिटेनके सुप्रसिद्ध नाटककार जार्ज बर्नार्ड शॉ के नाटक 'पिग मिलियम' का पञ्जाबीमें अनुवाद किया है। पञ्जाबीमें वे शब्दोंका वैसा चुनाव नहीं कर सके जैसा कि अँग्रेजीमें है और न पञ्जाबी अनुवादमें वह सरलता ही दिखाई देती है।

दी देहली आर्ट थियेटरने एक पञ्जाबी ऑपेरा (Opera) प्रस्तुत किया। यह पहला पञ्जाबी ऑपेरा था, जिसकी नींव पञ्जाबीके सुप्रसिद्ध कवि वारिस शाहके लिखे 'हीर-राँझे' के किस्सेपर है। इस ऑपेराको शीला भाटियाने लिखा था। कुछ कमजोरियोंके बावजूद भी यह ऑपेरा बहुत पसन्द किया गया।

ऊपर लिखे नाटककारोंके अतिरिक्त आजकल और भी कई सज्जन नाटक लिख रहे हैं। उसमेंसे रोशनलाल आहूजा, गुरुदयाल सिंह फुल, अमरीक सिंह, बलवीर सिंह, दुसाँझ आदि प्रमुख हैं। परन्तु पञ्जाबीके नाटककारोंमें सबसे ज्यादा प्रसिद्ध गार्गी है, जिनका पूरा नाम बलवन्त गार्गी है। यह कहना अनुचित न होगा कि गार्गीने अपना जीवन पञ्जाबी नाटक और पञ्जाबी रंगमञ्चको सँवारने और आगे बढ़ानेमें लगा दिया और इन्हें अपने इस कार्यमें काफी सफलता भी प्राप्त हुई। उन्होंने कई एकांकी नाटक भी लिखे हैं, जिनका अँग्रेजीमें भी अनुवाद हो चुका है। उनके लिखे हुए दो नाटक अर्थात् 'लोहा-कुट' और 'केसरो' बहुत प्रसिद्ध हुए। इनमें केसरोका 'अर्दन लैम्प' (The Earthen Lamp) के नामसे अँग्रेजीमें

भी अनुवाद हो चुका है। यह नाटक न केवल देहलीमें खेला गया बल्कि पोलैण्डमें भी खेला गया और वहाँ इसे काफी सफलता मिली। गार्गीको रंगमञ्चका भी काफी अनुभव है, क्योंकि उन्होंने विदेशोंमें जाकर वहाँके रंगमंचको भी जाँचा और परखा है।

यह सब कुछ होनेपर भी पञ्जाबी रंगमंचमें और भी बहुत कुछ करनेकी आवश्यकता है।

कविता :

पञ्जाबी साहित्यमें कवितापर सदासे ही बहुत जोर दिया गया है। सिखोंका धार्मिक ग्रन्थ अर्थात् 'गुरु-ग्रन्थ साहब' काव्यमें ही लिखा गया है। सिखोंके दस गुरु हुए; जिनमें सम्भवतः सात गुरु कवि थे और उनकी वाणीके अतिरिक्त कई और मुसलमान और हिन्दू सन्तोंकी वाणी भी 'गुरु-ग्रन्थ साहब' में मौजूद है।

उन्नीसवीं शताब्दीमें भाई वीरसिंहने पञ्जाबीमें कविता लिखनी शुरू की। जिनके बारेमें मैं पहले ही लिख चुका हूँ। उनके साथ ही कुछ और कवियोंका भी जिक्र आ चुका है।

यों तो हर साल पञ्जाबी भाषामें नएसे नए कवि जन्म लेते रहते हैं। जिनमें जनता बहुत दिलचस्पी लेती है, लेकिन सन् १९२० के बाद अब तक दो कवियों का ही पञ्जाबी भाषामें बोलबाला रहा है। इनमें से एक तो हैं मोहनसिंह और दूसरी हैं कवयित्री अमृता प्रीतम।

इस समय मोहनसिंह की आयु ५५ वर्षसे ऊपर हो चुकी है। वे न केवल उम्रमें अमृता प्रीतमसे कई वर्ष बड़े हैं, बल्कि उनकी कविताओंमें भी अमृताकी अपेक्षा परिपक्वता अधिक पाई जाती है। मेरे ख्यालमें अगर यह कहा जाए कि इस समय मोहनसिंह ही पञ्जाबीके सबसे बड़े कवि है तो यह बात गलत न होगी।

मोहनसिंहकी कविताओंका पहला संग्रह 'सावे पत्ते' (हरी पत्तियाँ) के नामसे सन् १९३६ में छपा। पञ्जाबमें एक इलाका 'पुठ्ठोहार' कहलाता था। ये कविताएँ उसी इलाकेके विषयमें है और ये इतनी लोकप्रिय हुई कि अब तक इस संग्रहकी लगभग पचास हजार प्रतियाँ बिक चुकी हैं। पञ्जाबी भाषामें किसी पुस्तकका इतनी ज्यादा संख्यामें बिकना कोई मामूली बात नहीं।

मोहनसिंह पहले खालसा कालेजमें प्रोफेसर थे, फिर उन्होंने नौकरी छोड़ दी और सन् १९३९ ई.में एक साहित्यिक पत्रिका 'पंज दरिया' निकालनी शुरू की। सन् १९४३ में उनकी कविताओंका नया संग्रह छपा, इसका नाम था 'अध वाटे।'

मोहनसिंहकी कविताओंपर कुछ लिखनेके लिए एक अलग ग्रन्थ की जरूरत है। उनकी कविताओंमें मनुष्य जीवनका पूरा चित्र झलकता दिखाई देता है। मोहनसिंहको जनता भी पसन्द करती है और वे पढ़े-लिखे लोगोंको भी अपनी

रचनाओंकी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। अब तक मोहनसिंहके आधे दर्जनसे ऊपर संग्रह निकल चुके हैं। उनका एक संग्रह 'वड्डा वेला' सन् १९५८ में छपा। उन्हें साहित्य अकादमीकी ओरसे पुरस्कार भी मिल चुका है।

मोहनसिंहने कई गज़ले भी लिखी हैं जो काफी पसन्द की गईं।

मोहनसिंह जितना काम कर चुके हैं इतनेसे ही से उनका नाम पञ्जाबी भाषामें सदा अमर रहेगा। परन्तु अभी पञ्जाबी भाषाको उनसे और बहुत कुछ आशाएँ हैं।

प्रीतमसिंह सफीर भी उच्च कोटिके कवि हैं। उनका 'आद-जुगाद' नामक कविता-संग्रह काफी लोकप्रिय हुआ है।

हरभजन सिंहकी कविताएँ भी बड़े चावसे पढ़ी जाती हैं। उनका 'तार तुपका' नामक एक बहुत सुन्दर संग्रह छप चुका है।

तरलसिंह उर्दूमे शायरी करते रहे हैं। आप बड़े ही सुलझे हुए कवि हैं और आपका अपना एक विशेष रंग है। पञ्जाबीमें आपके चार संग्रह निकल चुके हैं—'वंगार', 'काव्य हिलूने', 'हम्बले' और 'अनखदे फुल'।

बावा बलवन्त सिंहकी कविताओंका एक बहुत ही अच्छा संग्रह निकला है, जिसमें सुप्रसिद्ध कलाकार अब्दुल रहमान चगताई के बनाये हुए चित्र भी हैं।

करतारसिंह दुग्गल की कविताओंके सग्रह 'बन्द दरवाजे' और ज्ञानसिंहके संग्रह 'धरती घुमदी रही' का अच्छा स्वागत हुआ।

पञ्जाबी साहित्य अकादमी बहुत कुछ कर चुकी है और इस बातकी आशा की जाती है कि भविष्य में भी यह काफी काम करेगी। इस अकादमीने इतर सिंहकी पुस्तक काव्य अध्ययन, प्रीतम सिंहका शब्द कोश और डॉक्टर राजेन्द्र-प्रसादकी जीवनी भी छापी है। दूसरी भाषाओंसे पञ्जाबीमें अनुवाद भी छापे जा रहे हैं।

एम. अेस. रन्धावाने पञ्जाबी भाषामें बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने कला और लोकगीतोंके सम्बन्धमें कई अच्छी-अच्छी पुस्तकें लिखी हैं। जैसे:—'कुल्लू दे लोकगीत', 'काँगड़े दे लोकगीत' आदि।

पञ्जाबीके विद्वान कपूरसिंह (ई. सी. एस.) ने भी कई विषयोंपर बहुत गम्भीर लेख लिखे हैं। ये लेख पुस्तकोंके रूपमें प्रकाशित हो चुके हैं।

देशकी स्वतन्त्रताके बाद पञ्जाबी भाषा बहुत तेजीसे प्रगति कर रही है। आशा है कि शीघ्र ही पञ्जाबी भाषाका साहित्य हर दृष्टिसे सम्पन्न हो जाएगा।

• • •

अमृता प्रीतम

[कवि-परिचय]

अमृता प्रीतम

● ● ●

अमृताजीका जन्म ३१ अगस्त सन् १९१९ ई. को गुजरांवालेमें हुआ था। लाहौर से चालीस मील आगे स्थित यह शहर अब पाकिस्तानमें आ चुका है। अमृताजीकी माताजीका नाम राजकौर और पिताजीका नाम करतारसिंह 'हितकारी' था। माता-पिताने बेटीका नाम अमृतकौर रखा।

अमृताजी जब ग्यारह वर्ष ही की थीं उनकी माताजीका स्वर्गवास हो गया। उनके पिताजी युवावस्थामें ही गेरुए वस्त्र पहनकर साधु हो गए थे। इन्हीं दिनों उन्होंने संस्कृत और हिन्दी साहित्यका ज्ञान प्राप्त किया। वे हिन्दीमें कविताएँ भी करते रहे। उस समय उन्होंने अपना उपनाम 'पीयूख' रखा था, जिसका अर्थ है—अमृत। जब उन्होंने अपनी बेटीका नाम अमृत रख दिया तो अपना उपनाम 'पीयूख' के स्थानपर 'हितकारी' रख लिया।

माताके स्वर्गवास होनेके पश्चात् उनका पालन-पोषण उनके पिताजी ही ने किया। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करनेके बाद उन्होंने सन् १९३२ में 'विद्वानी' की परीक्षा उत्तीर्ण की। १९३३ में 'ज्ञानी' पास कर ली। फिर उन्होंने एफ. ए. पास करनेकी तैयारी भी की, परन्तु कुछ परिस्थितियोंके कारण परीक्षामें बैठनेका मौका ही नहीं मिला।

दिसम्बर १९३९ में जब अमृतकौर अपने बीस वर्ष पूरे कर चुकीं, तब उनका विवाह लाहौर में श्री प्रीतम सिंह कवातड़ाके साथ हुआ। कई वर्षोंके बाद अमृतकौर ने अपना नाम अपने जीवन-साथीके नामके साथ मिलाकर नया नाम अपना लिया। अब वह अमृतकौर के स्थान अमृता प्रीतम कहलाने लगीं।

उनके पिता ज्ञानी करतारसिंह 'हितकारी' उच्च कोटिके विद्वान थे और जैसा कि ऊपर कहा गया है, आप काव्य-रचना भी किया करते थे। उन्हींसे उनकी सुपुत्रीको भी काव्य-रचना करनेकी प्रेरणा मिली। अमृताजी स्वयं इस विषयमें लिखती हैं :—

"मैंने सन् १९३५ में पहली कविता लिखी। जिस तरह किसी बालकको उँगली पकड़कर उसे मार्गपर चलाया जाता है, उसी तरह मुझे मेरे पिता 'हितकारी' जीने कविता लिखनेका ढंग बताया।

पहले-पहल ऐसा भी हुआ कि वे मुझे 'काफिया और रद्दीफ' लिख कर दे देते और मैं जोड़-जोड़कर चार-छह या आठ सतरें बना देती। वे कई सतरें काट देते और कई उसमें जोड़ देते, कइयोंको थोड़ा बहुत बदल देते एवं विषयके दृष्टिकोणसे उन्हें क्रमानुसार कर देते।

कुछ समयके बाद मुझे काफिये के स्थानपर केवल विषय बता देते और मैं स्वयं 'आ' या 'र' का सरल-सा 'काफिया' चुनकर कुछ सतरें जोड़ लेती। फिर कई बार मुझे कोई पंक्ति या कोई ख्याल अपने आप ही सूझ जाता, तो मैं कविता बनाकर उन्हें दिखा देती। मेरे विचार में करीब दो वर्ष तक मैंने कोई ऐसी कविता नहीं लिखी जो उनसे ठीक करवाये बिना छपनेके लिये भेज दी हो।"

'गुरमत ट्रैक्ट सोसाइटी' लाहौरकी ओरसे सन् १९३५ में अमृताजीकी आरम्भकी कविताएँ 'ठन्डियाँ किरनां'के नामसे एक ट्रैक्टके रूपमें छपीं। सन् १९३६ में अमृताजीका पहला काव्य-संग्रह 'अमृत लहरां' प्रकाशित हुआ, जिसमें सौसे ऊपर धार्मिक और सामाजिक कविताएँ थीं। ज्ञानी करतारसिंह 'हितकारी' १९२९से 'रणजीत नगारा' नामक एक धार्मिक और साहित्यिक पत्रिका निकाल रहे थे। अमृताजीकी रचनाएँ पहले-पहल इसी पत्रिकामें छपती रहीं, जिससे उनका उत्साह बढ़ता गया।

अक्टूबर १९३८ में अमृताजीने स्वयं एक पत्रिका 'नवीं दुनिया' निकालनी आरम्भ की। यह काम अमृताजीने अपना शौक पूरा करनेके लिये किया था और इसकी देख-रेखमें उनके पिताजीका बड़ा हाथ था। इस पत्रिकाका 'गीत अंक' बहुत सुन्दर निकला, परन्तु यह पत्रिका अधिक समय तक नहीं चल पाई। परिणामतः अमृताजी ऑल इंडिया रेडियो लाहौरके लिए गीत और रेडियो-रूपक लिखने लगीं। उनके काव्य-संग्रह भी छपते रहे और इस तरह पञ्जाबीके काव्य-क्षेत्रमें धीरे-धीरे उनका स्थान बनता गया। इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि सुप्रसिद्ध लेखक सरदार गुरबख्शसिंह और प्रो. मोहनसिंहका अमृताजीपर प्रारम्भमें गहरा प्रभाव पड़ा था।

सन् १९४७ में जब भारतका बँटवारा हुआ तो अमृताजीको लाहौर छोड़ना पड़ा और उन्हें काफी आर्थिक हानि भी उठानी पड़ी।

उनके पतिका लाहौरके अनारकली बाजारमें अच्छा कारोबार था, उन्हें वह भी छोड़ना पड़ा। जुलाई १९४८ से वे दिल्लीमें ही रह रही हैं। दिल्लीके रेडियो स्टेशनमें उन्होंने कई वर्ष तक नौकरी की। फिर नौकरी छोड़कर फिल्मोंमें लिखनेके लिए वे बम्बई चली गईं, लेकिन वहाँ का फिल्मी वातावरण उनके अनुकूल सिद्ध नहीं हुआ। वे फिर दिल्ली लौट आईं। उनके दो बच्चे हैं—एक लड़की और उससे छोटा एक लड़का।

केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित की गई साहित्य अकादमीकी ओरसे उन्हें पुरस्कार भी मिल चुका है।

पञ्जाबके बँटवारेका उनके हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा। उनकी सुप्रसिद्ध कविता 'अज आखां वारसशाह नूं. . .' इसी प्रभावका परिणाम है। इस सम्बन्ध में उनकी सखीने लिखा है :—

"वारस-शाह" वाली कविता इन्होंने उस समय लिखी जब उन्हें सन् १९४८ में देहरादूनसे दिल्ली जाना पड़ा। वापसी के समय बिलकुल अकेली थीं, रातका सफर था, कुछ आर्थिक परेशानियाँ, कुछ सफरकी असुविधा और कुछ देहरादूनमें छोड़े हुए छोटे-छोटे बच्चोंका ख्याल और फिर दुःखोंसे पीड़ित, बेघरबारके लोगोंको देख-देखकर इनका मन भर आया। ऐसी दशामें उन्हें नींद आना कैसे सम्भव था। वे खिड़कीकी चौखटका सहारा लेकर रोने लगीं। . . . . . उनकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा अजस्र रूपसे बहती ही चली गई। . . . . रो-रोकर अब यह हाल हो गया तब उन्होंने बाहर की ओर देखा। रात ज्यादा अँधेरी नहीं थी। चाँदके हल्के-हल्के प्रकाशमें इन्हें धरती पर ऊँचे-नीचे टीले ऐसे लगने लगे मानो कब्रें हों। इन्हीं कब्रोंमेंसे उन्हें लगा मानो एक कब्र पञ्जाबियोंके दिलोंके सम्राट वारस-शाहकी हो। वहीं गाड़ीमें ही उन्होंने वारस शाह वाली कविता लिखनी आरम्भ कर दी, जब उनके घरके दरवाजेके आगे पहुँचकर ताँगा रुका तो उस समय वे कविताकी आखिरी दो पंक्तियाँ लिख रही थीं।"

इस कविताने पाकिस्तानी पञ्जाब और भारतीय पञ्जाब, यानी दोनों भागोंके पञ्जाबियोंको खूनके आँसू रुला दिये। पञ्जाबकी यह सुपुत्री पञ्जाबके दो टुकड़े हो जानेपर चुप नहीं रह सकी। इस घटनाने उनकी कविताओंको एक नया मोड़ दे दिया क्योंकि उन्हें मनुष्यके दुःखोंको बहुत करीबसे देखनेका मौका मिला।

इनकी उपर्युक्त सखी हमें बताती है :—

"माँने आज तक जो कुछ भी लिखा वह सब उनके हृदयकी पुकार है। हर तड़पका इनके दिलको तजुर्बा है। हर मानसिक पीड़ाको इन्होंने अपने मनमें महसूस किया है। पञ्जाबके बँटवारेके समय पञ्जाबियोंकी जो दशा हुई, वह उन्होंने

अपनी आँखोंसे देखी। वह स्वयं उन्हींमें से एक है, जिनका घर-द्वार सब कुछ बर्बाद हो गया.....।"

अमृताके बारेमें एक सीधी-सी बात यह कही जा सकती है कि वे पञ्जाबकी सुपुत्री हैं। यह बात मैं इस विचारसे नहीं कह रहा हूँ कि आज वे अपनी कविताओंके द्वारा पञ्जाबकी आवाज बन गई हैं.....सो तो वे हैं ही.....परन्तु मेरा इशारा इस बातकी ओर है कि अमृताके शरीरमें पञ्जाबकी मिट्टी, वहाँके अनाज, वहाँके पानी और वहाँकी हवाकी सुगन्ध बसी हुई है। उनके मिजाजमें भी वह तीव्रता, उत्साह और तुंधी है जो पञ्जाबकी धरतीपर जन्म लेकर, वहाँका अन्न खाकर और वहाँके गीत सुनकर ही पैदा हो सकती है। अमृताका केवल दिमाग ही नहीं सोचता—बल्कि उनके शरीरका एक-एक जर्रा, उनके लहूका एक-एक कतरा...सोचता है, महसूस करता है।

कहनेका मतलब यह है कि अमृताजी केवल बौद्धिक ढंगसे नहीं लिखती हैं। उनके शब्द केवल दिमागसे ही नहीं निकलते हैं, बल्कि उनमें हृदयकी अनुभूति भी रहती है। चिन्तनका यह भरपूर बल पाँच नदियों वाले पञ्जाबने उन्हें दिया।... पञ्जाबका लगभग यही मिजाज (Temperament) भी है। पञ्जाबी अन्तर्मुख (Introvert) होनेके साथ-साथ काफी हद तक बहिर्मुख (Extrovert) भी होते हैं। अगर कोई आदमी अधिकतर बहिर्मुख हो तो फिर उसकी बातमें कोई गहराई नहीं रहती। खाना-पीना और मौज करना ही ऐसे आदमीका काम होता है। वह इन्सान जो केवल अन्तर्मुख हो, कभी-कभी उसका दिमाग बीमारीकी सीमा-को छू जाता है। लेकिन अमृता प्रीतमने अपनी बुद्धिकी तीव्रताके साथ ही भरपूर शारीरिक बल भी पाया है। उनकी नसोंमें स्वस्थ लहू बहता है।

पञ्जाबके पुराने कवियोंमें भी यही बात पाई जाती है। हीर स्यालके महाकवि सैय्यद वारिस अली शाहके काव्यमें भी हमें यही चीज दिखाई देती है। पञ्जाबमें सदा ऐसी ही परिस्थिति रही। भारतपर आक्रमण करनेवाले पञ्जाब ही की ओरसे आते रहे, जिससे पञ्जाबियोंके जीवनमें एक सख्ती आ गई। इसके साथ ही पञ्जाबका जलवायु लाभदायक था। लोग मेहनती थे। खाने-पीनेकी कमी नहीं थी। इसीलिए उनका अपने प्यारके बारेमें, खाने-पीने और रहन-सहनके बारेमें एक दृष्टिकोण बन गया।

अमृता प्रीतमका जन्म गुजरांवाले* में हुआ और देश-विभाजनसे पहले अमृताने अपने जीवनके सत्ताईस-अट्ठाईस साल अविभक्त पञ्जाब ही में व्यतीत किये।

---

*इन पंक्तियोंके लेखकका जन्म भी गुजरांवाले जिलामें ही हुआ है। यद्यपि मैं वहाँ ज्यादा समय तक नहीं रहा, लेकिन बीच-बीचमें मैं वहाँ जाता रहा। जिला गुजरांवालेमें ही हमारा गाँव था। वहीं हमारा मकान और हमारी जमीन थी।

गुजराँवाला लाहौरसे भी बयालीस मील और आगे है। रावी पारका यह इलाका ठेठ पञ्जाबी इलाका है, यहाँ खड़ी पञ्जाबी बोली प्रचलित थी। सैय्यद वारिसअली शाहने इसी भाषामें 'हीर स्याल' लिखी है। लुधियाना, जालन्धर आदिमें जो भाषा बोली जाती है उसमें पञ्जाबीके कई शब्दोंका उच्चारण हम लोगोंके उच्चारणसे भिन्न होता है। गुजराँवालेके और आगे वाले इलाकेमें भी पञ्जाबी बोली फिर कुछ बदल जाती है। गुजराँवाला एक तरहसे पञ्जाबके बीचोंबीच स्थित है। यहाँकी और उसके निकट दूसरे इलाकों यानी शेखूपुरा, गुजरात आदिकी बोलीको हम पञ्जाबकी खड़ी भाषा कह सकते हैं।

इस तरह अमृताने अपनी मातृभूमिके सभी गुण विरासतमें पाये।

पहले-पहल जब अमृताने साहित्य-क्षेत्रमें पाँव रखा तो वे पञ्जाबी कविताकी पुरानी परम्परासे बाहर नहीं निकल पाई थीं। उनकी कविताओंका पहला संग्रह 'अमृत लहराँ' सन् १९३६ में छपा। उन्होंने अपनी इस पुस्तककी भूमिका भी काव्यमें ही लिखी। यही पुराने कवियोंकी रीति चली आती थी। अपनी हर कविताके अन्तमें पुराने कवियोंकी भाँति ही अमृता अपना नाम लिखती थीं। उस समय इनके मनपर धार्मिक विचारोंका भी प्रभाव था। इसी किस्मके विषयपर उन्होंने लिखा :—

कौन अन्त लै रेत दे किनकियाँ दा ?
महल विच आकाश दे चिने केहड़ा ?
केहड़ा करे शुमार सतारयाँ दा ?
तुपके गिन बरसात दे कौन दस्से ?
केहड़ा तेरे उपकार दा अन्त पावे ?
अते अमृत दे दोशाँ नूँ गिने केहड़ा ?

[रेत के ज़र्रों का अन्त कौन पा सकता है ?
आकाशके बीचोंबीच महल कौन खड़ा कर सकता है ?
इन सितारोंकी गिनती कौन कर सकता है ?
कौन बरसातकी बूंदोंको गिनकर बता सकता है ?
तेरे (भगवानके) उपकारोंका अन्त कौन पा सकता है ?
और अमृतके दोष भी कौन गिन सकता है ?]

उस समय यह था अमृताके सोचने और लिखनेका ढंग। हमें यह बात नहीं भूलनी चाहिए कि इस किस्मकी कविताएँ अमृताने पन्द्रह-सोलह वर्षकी उम्रमें या इससे कुछ पहले ही लिखी थीं। लेकिन धीरे-धीरे अमृताके सोचनेके ढंगमें और काव्य-रचनाके ढंगमें एक बड़ा परिवर्तन आया।

इस परिवर्तनकी झलक सन् १९४२ के आस-पास काफी साफ दिखाई देने लगी। अमृताने उस पुराने परम्परागत चक्करसे निकलकर नए क्षेत्रमें पाँव रखा। अगर हम यह कहें कि इस समय अमृताकी कविताओंमें बहुत ज्यादा भावुकता पाई जाती है, तो गलत न होगा। 'त्रेल धोते फुल', 'ओ गीताँ वालया', 'बदलाँ दे पल्ले विच' और 'संझ दी लाली' ऐसे ही संग्रह हैं, जिनमें अमृताके भावुकता भरे गीत मिलते हैं। इन गीतोंके बारेमें अमृताजीने खुद लिखा है :—

नैंनाँ दे नीले सागरों औंदियाँ, हंजू–सिपियाँ वगवग के।
गीताँ दे मोती औंदे, हन्जुआँ दे गल, लगलग के।

[आँसुओंकी सीपियाँ आँखोंके सागरसे बह-बहकर आती हैं।
गीतोंके मोती आँसुओंके गलेसे मिल-मिलकर चले आ रहे हैं।]

'त्रेल धोते फुल' मेंसे एक नमूना देखिए :—

साजन! ओ मिठ्ठे साजन!
मिठ्ठे गीताँ वाले
जिवें सुच्ची प्रीत जगमगाधीं ए
तिवें तेरे गीत.....
मेरे हिरदेय–गगन उत्ते डुलडुल किरदे।

[साजन! ओ मीठे साजन!
मीठे गीतों वाले
जैसे सच्ची (पवित्र) प्रीति जगमगाती है
उसी तरह तेरे गीत.....
मेरे हृदयके आकाशपर टपक-टपककर गिर रहे हैं।]

एक तो अमृताजी वैसे ही नारी है और फिर नारीके सीनेमें कवयित्रीका हृदय पाया है। इसीलिए उस युवावस्थामें उनकी कविताओंमें अधिकसे अधिक भावुकता पायी जाती है। उनके संग्रह 'ओ गीताँ वालया' मेंसे इसी प्रकारका एक और नमूना देखिए :—

हवा पत्तेयाँ दे कन विच आके कैंहदी, ए—
"मैं ओह दे कोलों आई हाँ।"
पत्ते तैनूं वेख दे नहीं—
पर तेरा नाँ सुनके नच उठ दे ने।

[हवा पत्तोंके कानमें आकर कहती है
"मैं उसीके पाससे होकर आ रही हूँ।"

पत्ते तुझे देखते तो नहीं,
परन्तु तेरा नाम सुनकर नाच उठते हैं।]

सन् १९४२ तक पञ्जाबीके दो महान् साहित्यकार मोहनसिंह और गुरुबख्श सिंह अपनी बहुत अच्छी रचनाएं प्रस्तुत कर चुके थे। जैसा कि मैंने पीछे संकेत किया है, इन दोनों सज्जनोंका अमृताजीपर काफी प्रभाव पड़ा है।

इस समय तक पञ्जाबमें मोहनसिंहकी कविताओंकी धूम मच चुकी थी। अमृताको भी इस महान् कविकी रचनाओंसे काफी प्रेरणा मिली। कभी-कभी अमृताने उन्हीं विषयोंपर कविताएँ लिखीं, जिनपर मोहनसिंह पहले ही लिख चुके थे। अमृता की बाज कविताओंमें बिलकुल मोहनसिंहकी भाषा और उन्हींकेसे भाव और उनकासा ही लहजा नजर आता है।

गुरुबख्श सिंह कवि नहीं है, लेकिन उनकी रचनाओंमें गहरी वास्तविकता है। खासकर कम्युनिज्मको स्वीकार कर लेनेके बाद उनकी रचनाओंमें यह गुण और बढ़ गया, जिसका अमृतापर भी प्रभाव पड़ा। अमृताकी नीचे लिखी पंक्तियोंमें यह प्रभाव स्पष्ट झलकता है :—

मेरे कलाकार,
ते मैनूं एह वी पता ए
तेरे पंज तत दे शरीर नूं
तेरे हड मास दे पिंजर नूं
तेरियाँ आन्द्राँ, तेरे खून नूं,
रोटी वी चाहीदी है।

[मेरे कलाकार,
मैं यह भी जानती हूँ
कि तेरे पाँच तत्वोंके बने हुए शरीरको
तेरी हड्डियों और माँसके बने हुए पिंजरको
तेरी नसों, तेरे लहूको
रोटीकी भी आवश्यकता है।]

इस तरहसे हम देखते है कि अमृताकी कविताओंमें भावुकताके साथ-साथ एक नयी गहराई और वास्तविकता दिखाई देने लगती है। उनकी एक और कवितामें हम स्पष्ट रूपसे एक बदला हुआ दृष्टिकोण देख सकते है। इस कविताका नाम है— 'सँझ दी लाली' अर्थात् सन्ध्याकी लाली :—

इक सी कुड़ी
ओहनें किसे नूं लभना सी
सी शह हनेरा

सूरज दा दीवा
तलियाँ ते धर
ओह नूं लभ्भन टुर पई
तलियाँ ते दीवा रँख
राहवाँ ते अक्खाँ चुक
चढदे तों लैहदे तक
विचारी सारा दिन
ओह नूं लभ्भदी रही।
जांदी दे रह विच
पच्छम खड आई
ते ओह दे हत्थों
छुटक गया दीवा
ते डिग गई बत्ती।
लक सी ओहदे
नीले असमाना दी
बदली जही धोती
डिगदी होई बत्ती
ओहदे पल्ले नाल छोही
ते शामा वेले
सारयाँ ने तकया
ओहदे पल्ले दी कन्नी
सी लट-लट
बलदी पई।

[एक थी लड़की
उसे किसीकी तलाश थी
घोर अन्धेरा छाया था
सूर्यका दीपक
हथेलियोंपर धरकर
वह उसे ढूंढनेको चल निकली
हथेलियोंपर दिया रखे रास्तोंपर नजर दौड़ाती
पूरबसे पश्चिम तक
बेचारी सारा दिन
उसे तलाश करती रही।

चलते-चलते, रास्तेमें
पश्चिम-खंड आ गई
और उसके हाथसे
झटककर दिया गिर पड़ा
और उसके साथ बत्ती भी गिरी।
उसकी कमरसे
नीले आकाशकी
बदली जैसी धोती (लिपटी हुई थी)
गिरती हुई बत्ती
धोतीके पल्लेसे छू गई
और शामके समय
सबने देखा (कि)
उसके पल्लेका कोना
लट-लट करके
जल उठा।]

यह वास्तविकता नीचे लिखे शब्दोंमें और भी भली भाँति स्पष्ट दिखाई देती है :—

हुनर भुक्खा रोटिये !
प्यार भुक्खा गोरिये !
काहदा है रुख निज़ाम दा
फल कोई लगदे नहीं।

[ऐ रोटी ! हुनर भूखों मरता है,
ऐ गोरी ! प्यार भी तो भूखा है
कैसा है यह सामाजिक ढाँचेका पेड़
कि इसमें फल तो कोई लगता नहीं।]

सन् १९४२ में जब बंगालमें अकाल पड़ा तो अमृताने इस घटनापर भी कविता लिखी। इस तरह हम देखते हैं कि धीरे-धीरे अपने आस-पासकी घटनाओंने अमृताके ध्यानको अपनी ओर आकर्षित किया है। वह समाजमें फैली हुई खराबी और बेचैनीको अपनी कविताओं द्वारा उपस्थित करती रही है।

सन् १९४७ में पञ्जाबके बँटवारेकी घटना एक ऐसी घटना थी जिसने अमृता की आत्माको झकझोर दिया। उनकी जीवनीकी झलक दिखाते हुए मैं इसका जिक्र कर चुका हूँ। वह पञ्जाब जिसमें हिन्दू-मुसलमान और सिख कई शताब्दियोंसे एक दूसरेके साथ मिल-जुलकर रहते थे, अब कटकर दो टुकड़ोंमें बँट गया था।

इतना ही दुःख क्या कम था ! इसके साथ ही पञ्जाबियोंने बड़ी निर्दयतासे एक दूसरेको मारना-काटना भी शुरू कर दिया। उस समय अमृताको पञ्जाबके मशहूर प्रेमियों—हीर-राँझेकी याद आई, जिन्होंने कई सौ वर्ष पहले इसी धरतीपर प्रेमका खेल खेला था। उस समयसे लेकर अब तक उनकी प्रेम-कहानी हर पञ्जाबीके दिलमें जीवनकी ऊष्माका सञ्चार करती रही है। पञ्जाबका शायद ही कोई ऐसा कवि हो जिसने हीर-राँझेके किस्सेपर अपनी कलम न उठाई हो। इसके बाद अमृताको वारिस शाहकी याद आई। इस महाकविने हीर-राँझेका ऐसा किस्सा लिखा जो करीब दो सौ वर्षसे पञ्जाबके कोने-कोनेमें गाया जा रहा था। अमृताने इसी वारिस शाह पर एक कविता लिखी, जिसका पहला बन्द यह है :—

अज अखाँ वारस शाह नूं, कितों कबरां विच्चों बोल !
ते अज किताबे-इश्क दा, कोई अगला वर्का फोल !
इक रोई सी धी पंजाब दी तूं लिख-लिख मारे वैन
अज लक्खाँ धियाँ रोंदियाँ, तैनूं वारस शाह नूं कैहन :

[आज मैं वारिस शाहसे कहती हूँ कि तू वहीं कब्रोंमेंसे बोल,
और आज प्रेमके ग्रन्थका कोई नया पन्ना खोल !
किसी समय पञ्जाबकी एक बेटीके रोनेपर तूने कितना विलाप किया था !
परन्तु आज पञ्जाबकी लाखों बेटियाँ तुझे (वारिस शाह) को पुकार-पुकारकर कहती हैं . . .]

इस दुःख-भरी कविताका आरम्भ इन शब्दोंसे होता है। कुछ इन शब्दोंसे उस गहरी चोटका अन्दाजा लग सकता है जो इस दुर्घटनासे अमृताके दिलको लगी।

देशके स्वतन्त्र होनेपर धीरे-धीरे अमृताके जख्म भरने लगे और उन्होंने अपने जीवनमें पहली बार स्वतन्त्र देशकी हवामें साँस ली। समय पाकर जख्म भर जाते हैं . . . . . चाहे अमृता पञ्जाबके विभाजनकी घटनाको कभी न भुला सकें, फिर भी उन्होंने अपने देशके रहनेवालोंको आगे बढ़नेका सन्देश दिया है :—

एह धरती मैं आपे गोडी
एह-कनकाँ मैं आपे वड्डियाँ
एह रोटी अज मेरी होई
मेरा हो गया (भात)।

[इस धरतीपर मैंने स्वयं हल चलाया
इस गेहूँकी मैंने स्वयं कटाई की

यह चोटी आज मेरी अपनी हो चुकी
और यह भात भी अब मेरा हो गया।]

अमृता नारीके दुःख-सुखको भली-भाँति समझती हैं। उन्हें इस बातका पुरुषोंसे ज्यादा अनुभव होना स्वाभाविक बात है। उनकी कविताओंमें अक्सर हमें नारियोंपर होनेवाले अत्याचारोंके प्रति उनके हृदयका आक्रोश एवं तीखे व्यंग्य मिलते है। अपनी कविता 'कन्यादान' में वे लिखती हैं :—

रत्ती मेंहदी नाल लबेड़ी
सूहे सालू विच्च लपेटी
पीले सोने नाल वलेटी
मास दी बोटी।

[लाल मेंहदीसे रंगा हुआ
सुर्ख चादरमें लिपटा हुआ
पीले सोनेसे लदा हुआ
माँसका टुकड़ा।]

इन पंक्तियोंमें अमृताने एक दुलहनका कैसा दुःख-भरा चित्र खींचा है। कोई शब्द अधिक नहीं, कोई दूरका इशारा नहीं, एक सरल-सी बात है जो दिलमें सीधे उतर आती है!

अमृताने पञ्जाबके देहात, वहाँके मौसम और त्यौहारोंपर कई गीत लिखे हैं। कहीं देहाती घरोंके चित्र हैं तो कहीं वहाँके जीवनकी झलकियाँ। एक नमूना देखिए :—

शावा नीं घूकर चर्खी दी!
वस्दा रहे मेरी अमड़ी दा वेड़
जित्थे पिपलाँ दी छाँ
सठ सहेलियाँ दा जोड त्रिंजन
मैं आँगन चर्खा डाह
शावा नीं घूकर चर्खी दी!

[शाबाश चरखे की घूं-घूं
आबाद रहे मेरी माँका आँगन
जहाँ पीपलकी छाया है
साठ सहेलियाँ मिल-जुलकर चरखा कातने बैठी हैं
मैंने (भी) आँगनमें अपना चरखा डाल दिया है
शाबाश चरखे की घूं-घूं!]

पञ्जाबमें जब कुछ लड़कियाँ या स्त्रियाँ मिल-जुलकर चरखा कातने बैठती हैं तो इसे 'त्रिंजन' कहते हैं। ऊपर अमृताने ऐसे ही अवसरका चित्रण किया है। ऐसे ही सरल शब्दोंमें वे एक जगह और लिखती हैं :—

उच्चे उच्चे पिप्पल
ते लम्मां नें दहलियां,
पींघां विच्च गोरियां
ते कन्ना विच्च बालियां।

[ऊँचे-ऊँचे पीपल
और शीशम के लम्बे-लम्बे पेड़
झूले पर गोरियाँ
जिनके कानोंमें (हैं) बालियाँ।]

एक और कविता 'पींघ झुटेंदी', 'मुटियार' में एक नौजवान लड़कीको झूला झूलते इस प्रकार चित्रित किया गया है :—

गल गुलाबी, होंठ उनाबी
मत्था झिक्कां मारे।
दो सोहनीं दे नैंन चमकदे
ज्यों असमानी तारे।
पींघ झुटेंदी दे....
कद सरू दा बूटा तेरा,
झुक झुक खाये हुलारे,
लक तेरे नूं पींघ दा झूटा
लगरां वांग उलारे।

[गुलाबी गाल, सुर्ख ओठ
माथा दमकता हुआ।
गोरीके दो नैन चमक रहे हैं
जैसे आकाशके तारे
झूला झूलती हुई युवतीके...
तेरा कद जैसे सरू का पेड़,
(तेरा शरीर) झुक-झुककर झकोरे ले रहा है
झूला झूलते समय तेरी कमर
बेलकी तरह बल खाती है।]

पञ्जाबके बारेमें लिखते समय अमृता मेहनती किसानों और खाते-पीते लोगोंकी मजबूरियोंको भी नहीं भूलतीं। उनकी नजर केवल सतह पर नहीं रहती, बल्कि वह आम लोगोंके जीवनमें डूबकर उनकी छिपी हुई परेशानियोंको भली-भाँति देखकर उनका वर्णन अपनी कविताओंमें करती हैं।

हमें अमृताकी कविताओंमें एक अजीब किस्मका अल्हड़पन मिलता है। या यों कहिये कि इस अल्हड़पनके साथ कुँवारापन भी घुल-मिल गया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि जब वे किसी गम्भीर समस्यापर भी कलम उठाती हैं, तो हमें उसमें भी अल्हड़पनकी झलक दिखाई देती है।

अमृताने अपने आपको पञ्जाब तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि उन्होंने पञ्जाबकी झलकियाँ दिखाने वाली कविताओंके द्वारा अपनी आवाजको मानवताकी पुकार बनानेकी भी कोशिश की है।

अमृताने केवल कविताएँ ही नहीं लिखीं हैं, बल्कि उनके लिखे हुए आधे दर्जनके करीब उपन्यास भी छप चुके हैं, जिनमेंसे 'जयश्री', 'डाक्टर देव', 'पिंजर' और 'आलना' बहुत पसन्द किये गये हैं।

उपन्यासोंमें भी अमृताका लिखनेका ढंग शायराना है। यद्यपि इतना शायराना अन्दाज उपन्यासके लिए उचित नहीं, फिर भी अमृता कहानी कहनेके ढंगसे भली-भाँति परिचित हैं। वे अपने उपन्यासोंमें अधिकतर नारीकी विवशता और इनपर समाजके द्वारा किए गए अत्याचारोंका चित्र खींचती हैं। समाजने नारीको जिस तरह जकड़कर रखा है इस मामलेमें हर कोई अमृतासे सहमत होगा। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि स्त्री समाजकी तरफदारी करनेमें अमृता जरूरतसे कुछ आगे ही बढ़ जाती है। ऐसा लगता है कि नारीकी दुर्बलताएँ और खामियाँ उन्हें एक सिरेसे ही दिखाई नहीं देतीं; जिसका नतीजा यह होता है कि उनकी कहानीमें सन्तुलनकी कमी रह जाती है।

अमृताने सबसे पहले 'जयश्री' लिखा। इस उपन्यासमें अमृताने यह दिखानेकी कोशिश की है कि स्त्रीको रुपयेसे खरीदा हुआ पति नहीं चाहिए। वह ब्याहके मामलेमें सौदेबाजी पसन्द नहीं करती तथा इस किस्मकी जो और बातें अमृताने लिखी हैं वे पढ़नेमें बड़ी भली मालूम होती हैं,अच्छी भी लगती हैं, लेकिन हैं वे सत्यसे दूर। वास्तवमें ऐसा होता नहीं, क्योंकि यह तो अक्सर होता है कि पुरुष रुपयेको हाथका मैल समझता है, लेकिन स्त्रियाँ धन-दौलतके मामलेमें खास होशियार होती हैं। मैं यह नहीं कहता कि दुनियामें आदर्शवादी स्त्रियाँ होती ही नहीं लेकिन अधिकतर वे यथार्थवादी होती हैं।

'डाक्टर देव' अमृताका शायद सबसे मशहूर उपन्यास है। इसमें करीब-करीब सारे पात्र इस किस्मके हैं जो आमतौरसे हमें इस दुनियामें दिखाई नहीं देते। उदाहरणके तौरपर यह बात कि 'प्यार, प्यारकी खुशीमें है, छीन लेनेमें या कब्जा जमा लेनेमें इन्साफकी जीत नहीं होती। पक्षी कभी पिंजड़ेमें रहकर गा नहीं

सकता। गाना ही जीवन है। उड़ना ही जीवन है'। ये सब बातें वास्तविकतासे बहुत दूर हैं। इस तरहके पात्रोंकी रचना एक खास उम्र तक ही की जा सकती है और एक खास उम्रके पाठक ही इसमें दिलचस्पी ले सकते हैं।

'पिंजर' में भी कुछ इसी किस्मकी समस्या है। जहाँ तक समाजकी बनाई हुई पाबन्दियोंका सम्बन्ध है वहाँ तक मैं भी अमृतासे सहमत हूँ, क्योंकि इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे समाजके विधान बनाने वाले पुरुष थे और उन्होंने समाजको केवल पुरुषोंका ही समाज बना दिया है।

'आलना' में दूसरी किस्मका कथानक है। इसमें अनाथ बच्चोंके जीवनका वर्णन है। माता-पिताके प्यारके बिना उनकी क्या दशा होती है। वे अनाथालयमें कैसे पलते हैं। यह उपन्यास कहीं-कहीं पाठकके दिलपर काफी प्रभाव डालता है।

मेरे विचारमें अमृता अपने उपन्यासोंमें इतनी सफल नहीं रहीं जितनी कि अपनी कहानियोंमें दिखाई देती है। पहले-पहल कहानियोंमें भी कुछ इसी किस्मके विषय होते थे लेकिन अब उनकी कहानियाँ पहलेसे बहुत निखर गई हैं। विषयके लिहाजसे भी और टेकनीककी दृष्टिसे भी। उन्होंने कई ऐसी कहानियाँ लिखी हैं जो भारतकी दूसरी अन्य भाषाओंकी बेहतरीन कहानियोंके मुकाबलेमें रखी जा सकती है। यह ठीक है कि उनकी कहानियोंमें भी कई अनहोने जोड़-तोड़ और उतार-चढ़ाव होते हैं, फिर भी उनकी कहानियाँ हर तरहसे सफल दिखाई देती है। उनकी कहानियोंके कुछ संग्रह भी निकल चुके हैं—'छब्बी वरे बाग,' 'कुञ्जियाँ,' 'आखरी खत' आदि।

अमृताने इन सबके अलावा कुछ और पुस्तकें भी लिखी है। जैसे 'पञ्जाबी साहित्यका विकास', 'भारत दे उसरिये' आदि।

अमृता कहानीकार हैं, उपन्यासकार हैं...लेकिन मैं समझता हूँ कि वास्तवमें वे एक कवयित्री ही हैं। उनकी अन्य विद्याकी रचनाओंमें भी हमें यही रंग दिखाई देता है।

ऊपर मैंने लिखा है कि उनकी कविताओंमें अल्हड़पन और कुँवारापन पाया जाता है। जब वे कोई गम्भीर समस्या भी लेती हैं तो उसमें भी हमें इन्हींकी झलक नजर आती है। हो सकता है कि पञ्जाबके लोकगीतोंका अमृता के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा हो, जिसके फलस्वरूप लोकगीतोंका अल्हड़पन उनकी रचनाओंमें भी चला आया हो। मुझे तो स्वयं अमृतामें एक ऐसी ही नवयुवावस्था नजर आती है। शायद इसीलिए उनके प्रेम-भरे गीतोंमें हमें वही आनन्द आता है जो प्राचीन यूनानी कवयित्री 'साफो' के गीतोंसे प्राप्त होता है।

अभी अमृताकी उम्र ज्यादा नहीं है। हो सकता है कि वह आने वाले, और पच्चीस-तीस वर्ष तक कविता लिखती रहें। उनकी तबियत किस मार्गपर चल दे यह

कहना कठिन है, लेकिन मुझे उनकी कविताओके अन्तिम संग्रहमें कुछ जगहोंपर अच्छी-खासी परिपक्वता दिखाई देती है। या मैं यह भी कह सकता हूँ कि सुप्रसिद्ध अँग्रेज कवि कीट्सके शब्दोंमें अब इनके यहाँ 'लहू, कल्पना और बुद्धि सब कुछ घुल-मिल रहे हैं।'

अमृताके जीवनमें एक बहुत तेज विफलताकी लहर आई है। चूँकि वे कवयित्री हैं, इसलिए यह लहर अवश्य ही उनके अन्दर एक परिवर्तन लाएगी।

निम्नलिखित शब्द जो मैंने एक और संदर्भमें लिखे थे, इस समय अमृतापर भी लागू हो सकते हैं :—

"तिनके-तिनकेसे प्यार करते, कली-कलीके लिए आहें भरते, बूटे-बूटेको गले लगाते, जर्रे-जर्रेसे आँखें मिलाते, झांके-झांकेसे कन्धा भिड़ाते, गीत-गीतपर आँसू बहाते, नगमे-नगमेपर दिल गँवाते. . . . जीवन व्यतीत करनेका अन्दाज भी एक अन्दाज तो है, लेकिन यह किसी बेहद मजबूरी ही का अन्दाज हो सकता है . . . जिसके लिए इसके सिवा कोई चारा ही नहीं रहा हो।"

मैंने उन्हें कुछ ऐसी ही दशामें देखा है। . . . . हो सकता है कि उनकी यह हालत अस्थायी हो, लेकिन मुझे ऐसा लगा कि सदासे ही अमृताजीकी, कम या अधिक मात्रामें, ऐसी ही हालत रही होगी। जीवनसे उनके प्यारका फैलाव बहुत विशाल है, फिर भी अमृता असफल प्रेमकी भावनाएँ लिखनेमें ज्यादा सफल रही हैं। . . . . . शायद भावनाएँ उनके हृदयकी गहराइयोंसे निकलकर आती हैं।

मेरे विचारमें अमृताजी उन लोगोंमेसे नहीं है, जो इस धरतीपर अपने झण्डे गाड़ने आते है।...अमृताजी उनमेसे है जो अपने दिलपर दुःख और दर्दके दाग लेकर इस दुनियासे बिदा होते हैं। ... यह अलग बात है कि जब ऐसा इन्सान अमृता जैसा कवि हो, तो अपने पीछे कविताओंके रूपमें कुछ गुलाबी चिह्न तो जरूर ही छोड़ जाएगा।

● ● ●

अमृता प्रीतम

[काव्य-सञ्चय]

१. जीवे मेरा देस!

मान करां प्रनाम करां
मैं चुम्मा एसदे पैर
असी वतन दे, वतन असाढा
कौन हुन्दे ने गैर
जीवे मेरा देस ॥१॥

झीलाँ नच्चन, झरनें गावन
साडी धरती माँ
खेत खिलाराँ वाले एसदे
स्वर्गां वर्गी छाँ
जीवे मेरा देस ॥२॥

जीवे धरती, जीवन कामें
जीवे एसदी शान
असीं हाँ एसदे, एह है साडा
साडा हिस्तान
जीवे मेरा देस ॥३॥

१. मेरा देश जिन्दाबाद !

मैं इस देशका सम्मान करती हूँ। मैं इसके पाँव चूमती हूँ; इसको प्रणाम करती हूँ। हम देशके हैं और देश हमारा है। गैर कौन होते हैं।

मेरा देश जिन्दाबाद ! ॥१॥

झीलें नृत्य करती हैं; झरने गाते हैं। यह धरती हमारी माँ है। इसके खेत दूर-दूर तक फैले हुए हैं। यहाँकी छाया स्वर्गके सदृश है।

मेरा देश जिन्दाबाद ! ॥२॥

धरती जिन्दाबाद ! श्रमिक जिन्दाबाद ! इसकी शान जिन्दाबाद ! हम इसके हैं और यह हिन्दुस्तान हमारा है।

मेरा देश जिन्दाबाद ! ॥३॥

२. इक कुड़ी दा गीत

अज गुन्दाइयाँ नीं मैं मेढियाँ,
सूहा ते सावा मेरा वेस नीं ।
अक्खाँ ते दोवें अज डुल पइयाँ,
नीं मैं चल्ली बिगानें देस नीं ।।१।।

लावीं ते लावीं नीं कलेजे दे नाल माए !
दसीं ते दसीं इक बात नीं ।
बाताँ ते लमियाँ नीं, धीयाँ क्यों जमियाँ नीं
अज बिछोड़े वाली रात नीं ।।२।।

रखीं नीं रखीं सानूं अज दी रात माए !
रखे ते रखे कई साल नीं ।
पंछी निमानें अज उड चल्ले
माए सदा वस्सन तेरे डाल नीं ।।३।।

२. एक लड़कीका गीत

[प्रस्तुत कविता कवयित्रीके 'त्रिजन' नामक लम्बे गीतका एक अंश है। हिन्दू परिवारमे कन्याकी बिदाईका अवसर बड़ी ही करुणापूर्ण घड़ीकी सृष्टि करता है। विवाह होते ही वह आँगन, जिसने कितने वर्षों तक उसके मधुर स्वरको सुना था, पराया हो जाता है। वे खिड़कियाँ जिसने कितने वर्षो तक उसे झाँकते हुए देखा है, बेगानी हो जाती है। माता-पिताके वात्सल्य भरे प्यार, भाईके निश्छल अछूते स्नेहको तजकर वह विवश कर दी जाती है—दूसरा घर बसानेको। उस समय उसके हृदयमे कैसी हूक उठती है, व्यथा-भरी कितनी स्मृतियाँ करवट लेती है, वे सब यहाँ साकार हो उठी है !

स्वय नारी होनेके कारण अमृताजी सजातीय व्यथाकी तीव्रताको अधिक गहराईके साथ अनुभव कर सकी है। 'घायलकी गति घायल जाणै...।']

आज मैने अपनी चोटियाँ गुँथवाई है। लाल और हरे रंगके मेरे वस्त्र हैं, लेकिन मेरी दोनों आँखें छलक पड़ी हैं। हे माँ, आज तो मुझे बेगाने देश जाना है ! ।।१।।

हे माँ, मुझे अपने गलेसे लगा ले, लगा ले न ! माँ, एक बात तो बता दे। यों, बातें तो बहुत सी हैं, लेकिन तुम इतना ही बता दो कि लड़कियोंको जन्म क्यों देती हो ? आज बिछुड़नेकी रात है माँ ! ।।२।।

रख ले, हे माँ ! आजकी रात हमें और रख ले। कितने वर्षों तक तूने हमें रखा है। आज बेचारा पंछी यहाँसे उड़नेको है। हे माँ, तेरी शाखाएँ—जहाँ पंछी बसेरा करते हैं—सदा आबाद रहें ! ।।३।।

चर्खा जु डाह्नी आँ मैं, छोपे जु पानी आँ मैं,
पिड़ियाँ ते वाले मेरे खेस नीं ।
उत्तराँ नूँ दित्ते उच्चे महल ते माड़ियाँ,
धीयाँ नूँ दित्ता परदेस नीं ।।४।।

अज गुन्दाइयाँ नीं मैं मेढियाँ
सूहा ते सावा मेरा वेस नीं
अक्खाँ ते दोवें अज डुल पइयाँ
नीं मैं चल्ली बिगानें देस नीं ।।५।।

———————

यहाँ मैं चरखा लेकर बैठती हूँ, सूत कातती हूँ। मैंने चौकोर खानोंवाले कई खेश बनाए हैं, फिर भी बेटोंको ऊँचे-ऊँचे मकान और महल मिले। लेकिन बेटियोंको केवल 'परदेस' दिया! ॥४॥

आज मैंने अपनी चोटियाँ गुँथवाई हैं। लाल और हरे रंगके मेरे वस्त्र हैं। लेकिन मेरी दोनों आँखें छलक पड़ी हैं। हे माँ, आज तो मुझे बेगाने देश जाना है! ॥५॥

———

३. वारस शाह

अज अखाँ वारसशाह नूँ कितों कब्राँ विच्चों बोल !
ते अज किताबे—इश्क दा, कोई अगला वर्का फोल !
इक रोई सी धी पंजाब दी, तूँ लिख लिख मारे वैन
अज लक्खाँ धीयाँ रोंदियाँ, तैनूं वारस शाह नूं कैह्न ! ।।१।।

वे दर्दमन्दाँ द्या दर्दिया ! उठ तक अपना पंजाब
अज बेले लाशाँ विच्छियाँ, ते लहू दी भरी चनाब
किसे ने पंजाँ पानियाँ विच्च, दित्ता जहर रला
ते उन्नाँ पानियाँ धरत नूं, दित्ता पानी ला ।।२।।

एस जर्खेज़ जमीन दे, लूँ लूँ फुट्टया जहर
गिठ्ट गिठ्ट चढ़ियाँ लालियाँ, फुट फुट चढ़या कैह्र
विहु—वलिसी वा फिर वन वन वग्गी जा
ओह्ने हर इक वाँस दी वन्झली, दित्ती नाग बना ।।३।।

३. वारस शाह

[सन् १९४७ में पञ्जाबके विभाजनकी घटना एक ऐसी घटना थी जिसने अमृताके अन्तस्को झकझोर दिया। वह पञ्जाब, जिसमें हिन्दू मुसलमान और सिख भाईकी तरह सदियोंसे साथ रहते आ रहे थ, एक दूसरेके रक्तके प्यासे हो गए। अमृताजी स्वयं उन्हींमेंसे एक है, जिनका घर-द्वार सब कुछ बर्बाद हो गया। उस लूट-पाट, नोच-खसोट एवं पैशाचिकताको देखकर अमृताजीको पञ्जाबीके महान-कवि वारस शाहकी याद आती है और याद आती है पञ्जाबके मशहूर प्रेमी हीर राँझाकी जिन्होंने कई सौ वर्ष पहले इसी धरती पर प्रेमकी किलोल की थी और फिर उठती है उनके हृदयमें एक व्यथा, एक पीडा, एक कसक। वह छटपटाहट ही इस कविताकी प्रत्येक पक्तिसे बोल रही है!]

आज मैं वारस शाहसे कहती हूँ कि तू कब्रोंमेंसे बोल दे और प्रेम-ग्रन्थका कोई नया पृष्ठ खोल। तूने कभी पञ्जाबकी एक बेटीके रोने पर कितना विलाप किया था, किन्तु आज पञ्जाबकी लाखों बेटियाँ तुझे पुकार-पुकारकर कहती हैं .. ।। १ ।।

ऐ दु:खियोंके दर्द बँटानेवाले ! उठ, अपने पञ्जाबको तो देख। आज मैदानोंमें लाशें बिछी हुई हैं और चिनाब नदी लहूसे भरी है। किसीने (पञ्जावकी) पाँचों नदियोंमें जहर घोल दिया है और उन नदियोंने इसी पानीसे धरती सींच दी है ।। २ ।।

इस हरी-भरी धरतीके रोम-रोमसे विष फ़ुट पड़ा है। बालिस्त-बालिस्त भर ऊँची लहूकी लाली है और फुट-फुट भर हत्यारोंका ज़ुल्म। फिर विषभरी हवा जंगलमें बह निकली और उस हवाने बाँसकी हर बाँसुरीको नागका रूप दे दिया है ।। ३ ।।

पहला ढंग मदारियाँ, मंत्र गै गुवाच
दूजे ढंग दी लग गई, जने खने नूँ लाग
नागाँ कीले लोक-मुँह, बस फिर डंग ही डंग
पलो-पली पंजाब दे, नीले पै गै अंग ।।४।।

गलयों टुट्टे गीत फिर, त्रकलयों टुट्टी तंद
त्रिंजनों टुट्टियाँ सहेलियाँ, चरखड़े घूकर बंद
सने सेज़ दे बेड़ियाँ, लुड्डन दित्तियाँ रोड़
सने डालियाँ पीघ अज, पिप्पलाँ दित्ती तोड़ ।।५।।

जित्थे वजदीं सी फूक प्यार दी, वे ओह बन्झली गई गुवाच
राँझे दे सभ वीर अज, भुल गए ओहदी जाच
धरती ते लहू वस्सया, कब्राँ पइयाँ चोंन
प्रीत दीयाँ शहज़ादियाँ, अज विच मिज़ाराँ रोन ।।६।।

अज सम्भे कैदो बन गए, हुसन इश्क दे चोर
अज कित्थों ल्याइये लभ के वारसशाह इक होर
अज आखाँ वारसशाह नूँ तूंहे कब्राँ विच्चों बोल ।
तूं अज किताबे-इश्क दा, कोई अगला वर्का फोल ! ।।७।।

एक तरीका मदारियोंके मन्त्रका है, लेकिन लोग इसे भूल गए हैं। हाँ, दूसरे तरीकेका चस्का हर किसीको पड़ गया है। यानी नागोंने लोगोंके मुँह बन्द कर दिये हैं। अब तो केवल डंक[1] ही डंक हैं। देखते ही देखते पञ्जाबके सारे अंग (जहरसे) नीले पड़ गए! ॥ ४ ॥

गलेसे निकलते हुए गीत अधूरे रह गए। तकलीसे निकलता हुआ सूत टूट गया। त्रिजनोंमें बैठनेवाली सखियाँ बिछुड़ गईं। चरखोंकी घूँ-घूँ बन्द हो गई। लुड्डन[2] ने सेज-सहित सभी नौकाएँ नदीके धारमें बहा दीं। पीपलके पेड़ोंने शाखाओं सहित झूले तोड़ फेंके ॥ ५ ॥

जिस बाँसुरीसे प्यारके गीत बजते थे, वही बाँसुरी आज गुम है। राँझेके-से सभी प्रेमी बाँसुरी बजाना ही भूल गए! आज तो धरतीपर लहू की वर्षा हो रही है, और कब्रोंसे खून रिस रहा है। इश्क व मुहब्बतकी इस भूमिकी शाहजादियाँ आज कब्रोंमें मुँह छिपाए बैठी रोती हैं! ॥६॥

आज सभीने कैदो[3] का वेश धारण कर लिया है...और वे सौन्दर्य एवं प्रेमके चोर बन गए हैं। आज हम एक और वारस शाह कहाँसे ढूँढ़कर लाएँ। मैं आज उसी वारस शाहसे कहती हूँ कि तू कहीं कब्रोंसे बोल और अपने प्रेमके ग्रन्थका नया पृष्ठ उलट दे! ॥ ७ ॥

———

---

१ अमृताजीने नागका डंक मारना वर्णित किया है। लेकिन हिन्दी भाषामें बिच्छूका 'डंक मारना' और साँपका 'डँसना' प्रसिद्ध है।

२ लुड्डन उस मल्लाहका नाम था जो हीरकी सजी-सजाई नावकी देख-भाल किया करता था।

३ हीरके चाचाका नाम 'कैदो' था। इसीके कारण 'हीर-रांझा' पर सारी मुसीबत आई। —सं.

४. वसाखी

देश मेरा पंजाब नीं, होर वस्से कुल जहाँन,
गभरू मेरे देस दा, बाँका छैल जवान।
हल पंजाली एस दी, देवे खेत खिलार
मेहनत एस जवान दी, सोना दए पसार ।।१।।

खेत जु गोडे खेत जु बोजे, लै बोहल हुँन ला
चेत चढ़ दे रुत्ताँ फिरियाँ, नवीं रुत दा चा
बेलिया ! नवीं रुत दा चा ।।२।।

नढ्ढी देस पंजाब दी, हीराँ विच्चों हीर
ज्यों कोई सोहनी मृगनी जंगल बेले चीर
पाले लग्गी धुराँ दी, जिन्दड़ी देवे घोल
हरफ बोल दी हकदा मुँह दें दी कौल ।।३।।

नवीं कनक दी रोटी लावाँ रुग मलाई ढा,
बूरी मंहि दा दुद्ध चुवावाँ, शक्कर देवाँ पा
बेलिया ! शक्कर देवाँ पा ।।४।।

४. बैसाखी

[पञ्जाबके लोग बहुत प्राचीन कालसे 'बैसाखी' का पवित्र त्योहार मनाते आ रहे हैं। इस त्योहारके पीछे प्राकृतिक कारण तो हैं ही, साथ ही कुछ धार्मिक किम्वदन्तियाँ भी प्रसिद्ध हैं, जिसके कारण यह पर्व पञ्जाबके जन-जीवनका त्योहार बन गया है और लोग इसे बड़ी धूम-धामसे मनाते चले आ रहे हैं। इस त्योहारको अगर पञ्जाबका सबसे महत्वपूर्ण पर्व कहें, तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

इस दिन खेतों पर जानेसे पूर्व सारा गाँव-का-गाँव पासके नदी-किनारे या सरोवर पर जाकर स्नान करता है। ईश्वरसे अपने भविष्यके लिए शुभकामनाएँ करता है और मनौतियाँ मनाता है कि कटाई होनेपर अच्छा गेहूँ निकले।]

यों तो सारा संसार आबाद है, लेकिन मेरे पञ्जाबका-सा कोई देश नहीं है। मेरे देशका युवक तिरछा-बाँका जवान होता है। अपने हल और पञ्जालीसे वह खेतोंको हरा-भरा कर देता है। इस जवानकी मेहनतसे धरती सोना उगलती है ।।१।।

यह खेतमें हल चलाता है, बीज बोता है, और अनाजके ढेर लगा देता है। चैत्रके महीनेमें ऋतु बदल गई। सभीको नई ऋतुका चाव है। बेलिया*, नई ऋतुका चाव! ।।२।।

पञ्जाबकी युवती, हीरोंमें हीर है--जंगलमें घूमती हुई खूबसूरत हिरनी। वह अपने प्रेमके वचनको पूरा करती है और उसके लिए जीवनकी बलि भी दे देती है। वह सदा सच बोलती है और अपना प्रण पूरा करके रहती है ।।३।।

मैं नये गेहूँकी रोटी बनाती हूँ, उसमें अंजलि भर मलाई, फिर भूरी भैंसका दूध दुहाती हूँ और उसमें शक्कर मिला देती हूँ। बेलिया, उसमें शक्कर मिला देती हूँ! ।।४।।

---

* बेलिया--यदि हम चाहें तो पञ्जाबीके 'बेली' शब्दका समानार्थी हिन्दी 'मित्र' शब्द दे सकते हैं। किन्तु 'बेली' की सम्पूर्ण अर्थवत्ताको 'मित्र' शब्द व्यञ्जित करनेमें असमर्थ है।

देश मेरा पंजाब नीं, होर वस्से कुल जहाँन
गभरू मेरे देस दा, बाँकाँ छैल जवान
सिर ते चीरा राँगला, कुड़ता नवाँ स्वा
मोढे चादर खड़क दी, मेला लवे मनाँ ॥५॥

रुत वसन्ती उत्तों वेला भरी जवानी दां,
साल सुहन्दा चेतर लंघया, गई वसाखी आ
बेलिया ! गई वसाखी आ ॥६॥

————————

यों तो सारा संसार आबाद है, लेकिन मेरे पञ्जाबका-सा कोई देश नहीं है। मेरे देशका युवक तिरछा बाँका जवान होता है। सिरपर रँगी हुई पगड़ी बाँधकर, गलेमें नया कुर्ता, कन्धेपर कलफ लगी चादर खड़खड़ाते हुये वह मेला मना लेता है ॥५॥

वसन्त ऋतु और फिर चढ़ती जवानीका समय! चैत्रका महीना सुखसे गुजर गया। अब 'वसाखी' आ पहुँची। बेलिया, वैसाखी आ पहुँची! ॥६॥

५. सावन

बारीं महीनीं सावन आया
कोयल अम्बाँ ते बोले
पिप्पलाँ नूं पींघ पई
वे मैं झूठाँ हौले हौले
पिप्पलाँ नूं पींघ पई ।।१।।

निक्की निक्की कनीं दा मिंह वर्सेदा
मिंह वर्सेदा वारी,
मिठ्ठी नएन नें मेढियाँ गुन्दियाँ
सूही मेरी फुलकारी,
सुच्चो शाही दा कुड़ता पावाँ
कुड़ता ए नसवारी,
नौकर तेरी आँ
मैं सारी दी सारी
नौकर तेरी आँ ।।२।।

खट्टे ल्वानीं आँ मिठ्ठे ल्वानीं आँ
विच्च फुल्लाँ दे बूटे,
पींघ पवानी आँ
मैनूं दे जा इक दो झूठे
पींघ पवानी आं ।।३।।

५. सावन

[भारतवर्ष कृषि प्रधान देश है। जल ही यहाँका जीवन है। इसीलिए ज्येष्ठकी तपनसे व्याकुल यहाँका लोक-मानस बड़े ही तृषित नेत्रोंसे मेघोंकी राह देखता है और जब वर्षाकी—सावनकी मीठी फुहारें पड़ती हैं, तो जन-चित्त आनन्दसे झूम उठता है। फिर तो पेड़ोंकी डालोंपर झूले पड़ते हैं और सुनाई देते हैं चारों ओर गीत—सावनके मधुर सङ्गीत। तो, देखिए प्रस्तुत कवितामें सावनकी झड़ीके बीच पञ्जाबकी धरतीकी उमङ्ग और वहाँके लोक-जीवनका उच्छल आह्लाद !]

बारह महीनेके बाद सावन आया है। आमोंपर कोयल बोल रही है। पीपलपर झूला पड़ा है। वे और मैं झूला झूल रही हूँ। पीपलपर झूला पड़ा है ॥ १ ॥

नन्हीं-नन्हीं बूँदोंकी फुहारें पड़ रही हैं, मैं बलि जाती हूँ। अहा ! कैसी वर्षा हो रही है ! मिठ्ठी (नामकी) नाइनने मेरी चोटियोंको गूँथा है। मेरी फूलोंवाली ओढ़नी सुर्ख रंगकी है। 'सच्ची शाही' के कपड़ेका मेरा कुर्ता है। मेरे कुर्तेका रंग कत्थई है। मैं तुम्हारी दासी हूँ। मैं सम्पूर्णकी सम्पूर्ण तुम्हारी दासी हूँ ! ॥२॥

मैंने खट्टे और मीठे फलोंके पेड़ लगवाये हैं। उनके बीचमें फूलोंके पौधे हैं। अब मैं झूला डालने जा रही हूँ। मुझे जरा दो-एक बार झुलाते जाओ। मैं झूला डालने जा रही हूँ ॥३॥

बारीं महीनीं सावन आया
एह सावन मन भावे,
कुच्चे टिल्लयों बद्दल चढ़या
बद्दल चढ़या आवे,
दूर किते खेताँ विच्च बह के
गीत प्या कोई गावे
पौना पुरे दियाँ
नेरी चुन्नी उड उड जावे
पौना पुरे दियाँ ।।४।।

बारह महीनेके बाद सावन आया है। यह सावन मेरे मनको भाता है। ऊँचे टीलेके पीछेसे घटा उठी और बादल घिरते आ रहे हैं। दूर खेतमें कही कोई बैठा हुआ गीत गा रहा है। पुरवैया चल रही है। मेरी चुनरी उड़ी जाती है। पुरवैया चल रही है! ॥४॥

९. पंखेरुआ !

पौना दे पंखेरुआ
अज पंख मेरे वल मोड़ !

मेरे पिप्पल हरियाँ पत्तियाँ
मेरे रुक्खीं सावा बूर ।
मेरी टहली निक्का आलना
मेरा सावन निक्की फुहर,
अज रुत्तीं चढ़ियाँ रंगना
ते बार्गीं चढ़्या लोहड़ ।

पौना दे पंखेरुआ
अज पंख मेरे वल मोड़ ! ॥१॥

पत्त झड़े झड़ जानगे
रुक्खीं पै जाए खोड़,
लगरीं पै जाँ खलियाँ
टहनी नूं मचकोड़,
कन्नीं छिज्जे उम्र दी
भुग्गा हो जाए बोहड़ ।

पौना दे पंखेरुआ
अज पंख मेरे वल मोड़ ! ॥२॥

६. ओ पंछी !

ओ पवनके पंछी ! आज मेरी ओर पंख मोड़ दे !

मेरे पीपलमें हरी पत्तियाँ हैं। मेरे पेड़ोंमें बौर आए हैं। मेरी डाली पर एक नन्हा-सा घोंसला है। मेरे सावनमें नन्हीं-नन्हीं फुहारें पड़ती हैं। आज ऋतु रँगीली है और बागोंमें यौवन छाया है !

ओ पवनके पंछी ! आज मेरी ओर पंख मोड़ दे ! ॥१॥

जब पत्ते झड़ने लगेंगे तो झड़ते ही चले जाएँगे। पेड़ खोखले हो जाते हैं। कोपलें मुरझा जाती हैं और शाखाएँ मुड़-तुड़ जाती हैं। आयुका पल्ला मसक जाता है। बरगद-जैसा पेड़ भी खोखला हो जाता है।

ओ पवनके पंछी ! आज मेरी ओर पंख मोड़ दे ! ॥२॥

७. यादाँ दे हवाले

प्यार मेरा हो गया, यादाँ दे हवाले

कन्ढयाँ नालों टुट गए नाते
चप्पुआँ नालो रिश्ते मुक गए
दिल दरिया विच्च काँगाँ आइयाँ
अथरूँ खान उछाले।
यादाँ दे हवाले ।।१।।

हर सोहनी द्याँ कदमाँ अग्गे
अजे वी इक झनाँ पई वग्गे
हर पुन्नू द्याँ पैराँ हेठाँ
अजे वी तड़पन छाले
यादाँ दे हवाले ।।२।।

एह दुनियाँ वी तेरे लेखे
ओह दुनियाँ वी तेरे लेखे
दोवें दुनियाँ वार छड दे
प्यार करन वाले।
यादाँ दे हवाले! ।।३।।

जो बिरहा असाँ मंग के लीत
जो बिरहा सानूं सजना ने दित्ता
उस बिरहा दे घुप हनेरे
क्यों कोई दीवा बाले।
यादाँ दे हवाले ।।४।।

७. यादोंके हवाले

प्यार मेरा हो गया, यादोंके हवाले !

हर तटसे मेरा नाता टूट चुका है। अब चप्पूसे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं रहा। दिलके सागरमें ज्वार-भाटेका शोर है और आँसू उबल पड़ते हैं। यादोंके हवाले ! ॥१॥

हर सोहनी*के कदमोंके आगे अब भी एक चिनाब नदी बह रही है। हर पुन्नू+ के पाँवके नीचे अब भी छाले तड़प रहे हैं। यादोंके हवाले ! ॥२॥

तेरे कारण यह दुनियाँ भली लगती है और वह दुनिया भी। प्यार करनेवाले किन्तु इन दोनों से मुँह मोड़ लेते हैं। यादोंके हवाले ! ॥३॥

ओ विरह ! हमने तेरा ही विरह चाहा था। यह विरह हमें साजनने दिया है। इस विरहके निविड़ अन्धकारमें कोई दीपक क्यों जलाए ! यादोंके हवाले ! ॥४॥

---

* सोहनी—महीवालकी प्रेमिका थी, वह चिनाब नदी पार करके अपने प्रेमीसे मिलने जाया करती थी।

+ पुन्नू—एक मशहूर प्रेमी था, जो अपनी प्रेमिका सस्सीके लिए रेगिस्तानों-की खाक छानता फिरा।

८. पञ्जाब दे लोक-नाच

गिद्धा

मर मर के मैं हाड़ी बीजी, भर भर बोहल लगाए
कनकाँ खेत दियाँ——लै गए पुत्तर प्राय
कनकाँ खेत दियाँ ! ॥१॥

हड मेरे पाले विच्च नीले, लूआँ दे विच्च काले
इक जु बुर्की फड़ के तक्की, हत्थाँ दे विच्च काले
इल्लाँ वाँग झपटा मारन, उच्चयाँ महिलाँ वाले
गल्लाँ प्यार दियाँ, करीं ना सजना हाले
गल्लाँ प्यार दियाँ ॥२॥

८. पञ्जाबके लोक-नृत्य

गिद्धा

[अमृता प्रीतमने 'गिद्धा, सम्मी, झुम्मर और भाँगड़ा' ये गीत उसी स्वर-तालमें लिखे हैं, जिसमें कि वे गाये और नाचे जाते हैं।

गिद्धा नृत्यमें लड़कियाँ चुटकी लेती हैं, और ताली बजा-बजाकर नाचती हैं; फिर एक घेरेमें घूमती हुई गीतके बोल बोलती हैं और एक-दूसरेके हाथों-पर-हाथ मारती जाती हैं।

'गिद्धा' जैसी कविताओंमें अमृताजीने कविताकी नई जमीन तोड़ी है। उन्होंने लोक-जीवनकी वास्तविकताको समीपसे देखा है—परखा है। उन्होंने उस पृथ्वी-पुत्रकी ओर दृष्टि घुमाई है जो शीतकालकी ठिठुरन और ग्रीष्मकी तपनके बीच में भी सोनेकी फसल उगाता है। किन्तु वह इतना असहाय है, इतना बेबस है कि गेहूँका एक निवाला भी मुँहसे लगा नहीं पाता! और उसके हृदय-साम्राज्ञीकी फूलोंवाली ओढ़नी मैली होकर फट जाती है! क्यों? इसलिए कि उसके सुख, उसके सपने 'महलवालों' ने छीन लिए हैं!

भारतीय जनजीवनमें व्याप्त दैन्यका, विवशताका कितना कचोटता हुआ वर्णन है!]

मैंने असाढ़की फसल मर-मर कर तैयार की। अनाजके ढेर लगा दिए। मेरे खेतके गेहूँ उठा ले गए। हाँ, गेहूँ उठा ले गए! ॥१॥

सर्दीसे मेरे हाथ-पाँव नीले और लू के कारण (ग्रीष्म-ऋतुमें) काले हो गए थे, किन्तु जब एक निवाला हाथमें लेकर देखने लगी तो ऊँचे महलोंवाले मुझपर झपट पड़े। प्यारे साजन! अभी प्यारकी बातें मत करो। हाँ, अभी प्यारकी बातें मत करो! ॥२॥

एह धरती में गोडी बीजी, एह धरती में वाही
बुर्की कनकाँ दी··········असाँ ना दन्दी लाई
बुर्की कनकाँ दी ॥३॥

हार हुट के खेत जु बीजे, बीज बीज के हारी
मैली ते घस मैली हो गई, सूही मेरी फुलकारी
पा के धोवाँ धोके पावाँ, कुड़ता ए नसवारी
उमरा बीत गई··········एह सारी दी सारी
उमरा बीत गई ॥४॥

इस धरतीपर मैंने खुद हल चलाया, बीज बोया और इसे सींचा। किन्तु मुँहसे गेहूँका एक निवाला लगा नहीं पाया! आह, गेहूँका एक निवाला! ।।३।।

मेरी लाल रंगकी फूलोंवाली ओढ़नी मैली होकर फट गई। इस नश्वारी (कत्थई रंगके) कुर्त्ताको पहनकर धोती हूँ और धोकर उन्हें फिर पहनती हूँ। इसी प्रकार सारीकी सारी उम्र बीत गई! आह, सारी उम्र बीत गई! ।।४।।

सम्मी

मैं तेरी सम्मी—फड़ लै हाली जोतरा— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—सोना जमदे खेत— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी—दाती फड़ लै हालिया— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—मगरों लाह दे प्रेत— हो ढोला ।
मैं तेरी सम्मी—सभ्भे राह अज मोकले— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—उत्तों लाह दे छट— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी—तेरा हो गया जोबना — हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—तेरी हो गई वट— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी—ज्यू जवानियाँ माने— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—देनी आँ इक वाज— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी—पैली दी पत रख लै— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी—रख खेताँ दी लाज— हो ढोला ।

सम्मी

[पञ्जाबकी लड़कियाँ चाँदनी रातमें यह नाच नाचती हैं। इस नृत्यमें ढोलक नहीं बजाई जाती। तालका काम हाथोंके इशारों और पाँवकी धमकसे लिया जाता है।]

मैं सेरी सम्मी —ऐ किसान थाम ले अपना हल —हो मेरे ढोला*
मैं तेरी सम्मी —सोना उगले खेत— हो ढोला
मैं तैरी सम्मी —ऐ किसान पकड़ खुरपा— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी —फेंक दे सब क्लेश— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी —सभी मार्ग आज विशाल— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी —परे फेंक दे बोझा— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी —तेरे लिए जवानी मेरी— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी —तेरी है यह खेतकी सीमा— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी —बनी रहे जवानी तेरी— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी —तूझे दे रही एक आवाज— हो ढोला
मैं तेरी सम्मी —फसलोंकी तू रख ले पत— हो मेरे ढोला
मैं तेरी सम्मी —रख खेतोंकी लाज— हो ढोला

---

*ढोला—इस शब्दका ठीक समानार्थी हिन्दीमें कोई शब्द नहीं दिया जा सकता। पञ्जाबीमें यह शब्द 'प्रेमी' के लिए प्रयुक्त होता है और आमतौरपर देहाती भाषामें इसका प्रयोग चलता है।

३. झुम्मर

स्त्रियाँ--

मैं जु तैनूं आख्या खेताँ दे विच आ भला
मैं गोडाँगी पएलियाँ, तूँ क्यारे कडदा जा भला

मर्द--

मैं जु तैनूँ आख्या, खेताँ दे विच आ भला
कणक जु बीजाँ मैं कुड़े, तूँ पानी देंदी जा भला

स्त्रियाँ--

राखी रख रख मैं मुई, ते हड लै तूं खोर भला
भर भर बोहल जु लालए, उत्तों पै गए चोर भला

मर्द--

भन्ना भुक्खे महल नूं, चोर नूँ रक्खाँ थाँ भला
मैं धरती दा लाल नीं, धरती मेरी माँ भला

स्त्रियाँ--

नवीं कणक जु गुण लमा मैं, पेड़ा मक्खन दा भला
मेरा ज़ोबन हाक़ाँ मार्दा, मेरे वेड़े दे विच्च आ भला

झुम्मर

[चाँदनी रातोंमें या जलती हुई मशालोंके प्रकाशमें यह नृत्य होता है। इसमें स्त्री और पुरुष दोनों भाग लेते हैं। नाचनेवाले 'झुम्मरी' कहलाते हैं। इस नाचके साथ बड़े जोरसे ढोल बजाई जाती है।

प्रस्तुत कवितामें स्त्री और पुरुषके वार्तालापके माध्यमसे पञ्जाबी जीवन—वहाँकी खिलखिलाती हुई जिन्दगीको छन्दोंके साँचेमें ढाला गया है। किन्तु यहाँ ग्रामीण जीवनके बीचमें चलती हुई मधुर नोक-झोंकका ही चित्रण नहीं है, मनुहार-भरे निवेदनोंका ही आदान-प्रदान नहीं है, प्रत्युत इसकी पंक्तियोंमें छिटके हुए हैं स्फुलिङ्गके कण भी! इसमें मिलेगा दलित जनोंका महलोंको ध्वस्त कर देने का फूत्कार भी! वे महल जिनके कारण न जाने कितनी झोपड़ियोंका सुख उजाड़ दिया गया, वे महल जिनके लिए कितनी हंसती-खेलती बस्तियाँ वीरान बना दी गईं!]

स्त्रियाँ—

मैं तुझसे कहती हूँ कि जरा खेतों तक तो आ। मैं गोड़ाई करूंगी और तू क्यारी बनाता जा।

पुरुष—

मैं तुझसे कहता हूँ कि जरा खेतों तक तो आ। ऐ छोरी! मैं गेहूँ बोऊँगा और तू पानी देती जा।

स्त्रियाँ—

मैं रखवाली कर-करके मर गई और तेरी भी हड्डियाँ गल गई। हमने (अन्नके) मर-मरकर ढेर लगा दिए, किन्तु ऊपरसे चोर आ गया!

पुरुष—

इस महलको तोड़ दूं और चोरको जानसे मार डालूँ। मैं धरतीका लाल हूँ और धरती मेरी माँ है।

स्त्रियाँ—

नए गेहूँका मैं आटा गूंथूं और तुझे पेड़ा-मक्खन दूं। मेरा यौवन तुझे बुलाता है। मेरे आँगनमें आ न!

मर्द—

तूं अम्बाँ दा बुर नी, तूं सरह्यों दा फुल भला
तेरा जोबन चढ़या चँद नी, मैं कौकन तारां मूल भला

स्त्रियाँ—

मेरे हत्थीं मेंहदी राँगली, मेरी चूड़े वाली बाँह भला
मैं तेरी वे राँझणा, मैं होर किसे दी नाह् भला

[यहाँ तक पहुँचकर नाच और तेजीसे होने लगता है और बोल कुछ और ज्यादा तेजीसे गाये जाते हैं। इस तरह् यह नाच अपनी चरम सीमा तक पहुँचता है।]

———————

पुरुष—

तू आमोंका बौर है, सरसोंका फूल है। तुम्हारा यौवन चाँद है। भला इसका मोल मैं कैसे दूं!

स्त्रियाँ—

मेंहदी-रँगे मेरे हाथ हैं। चूड़ेवाली मेरी बाँह कितनी भली है! मैं तेरी राँझणा (राँझा) हूँ। मैं तेरी ही हूँ और किसीकी नहीं!

भँगड़ा

ढग· · ·ढग· · ·ढगा· · ·ढग !

तेरे कन्नाँ नूँ घड़ा दऊँ बाले
डुगडुगी पेई वज दी
असीं हो गए खेताँ वाले
डुगडुगी पेई वज दी ॥१॥

सुच्चे पट दा पवा लै ताणा
डुगडुगी पेई वज दी
मेरे सिट्टयाँ नूँ पए गया दाना
डुगडुगी पेई वज दी ॥२॥

मेरी कनक खेत चों बोली
डुगडुगी पेई वज दी
तेरी भर दऊँ रिज़क नाल झोली
डुगडुगी पेई वज दी ॥३॥

नीं मैं छोलयाँ नूँ दाती ला लऊँ
डुगडुगी पेई वज दी
पक्की इट दा मैं महल पवा दऊँ
डुगडुगी पेई वज दी ॥४॥

भँगड़ा

[जब खेत पक जाते हैं तो बैसाखके महीनेमें भँगड़ा नाचा जाता है। पञ्जाबके जाटोंका यह एक खास नृत्य है, जो अब फिल्म कम्पनियोंके द्वारा भारत के कोने-कोनेमें लोकप्रिय हो रहा है।]

ढग···ढग···ढगा···ढग !

तुम्हारे लिए कानकी बाली गढ़ा दूँगा। डुगडुगी बज रही। हम (आज) खेतवाले हो गए हैं। डुगडुगी बज रही। ॥१॥

तू रेशमके कपड़े बनवा ले। डुगडुगी बज रही। मेरी (अनाजकी) बालियोंमें दाने पड़ गए हैं। डुगडुगी बज रही। ॥२॥

मेरा गेहूँ खेतमें बोला। डुगडुगी बज रही। तुम्हारी झोली धनसे भर दूँ। डुगडुगी बज रही। ॥३॥

चनेके खेतमें मेरा खुरपा चला। डुगडुगी बज रही। मैं पक्की ईंटका महल बनवाऊँगा। डुगडुगी बज रही। ॥४॥

तेरे कन्नां नूं घड़ा झुकें वाले
डुगडुगी पेई वज दी
असीं हो गए खेतां वाले
डुगडुगी पेई वज दी ॥५॥

तुम्हारे लिए कानकी बाली गढ़ा दूंगा। डुगडुगी बज रही। आज हम खेतवाले हो गए हैं। डुगडुगी बज रही। ॥५॥

९. बारौं माह

किकरा वे कन्ड्यालया !
उत्तों चढ़या चेत,
जाग पेइयाँ अज पेइलियाँ
जाग पए अज खेत ।।१।।

किकरा वे कन्ड्यालया !
चढ़या अज वसाख,
साम्राज्य दे मुँह ते
उड उड पेंदी राख ।।२।।

किकरा वे कन्ड्यालया !
उत्तों चढ़या जेठ,
उस्सलवट्टे भन दी
धरती तेरे हेठ ।।३।।

किकरा वे कन्ड्यालया !
उत्तों चढ़या हाड़,
किन्नाँ कु चिर हन्ढदी
कख काण दी आड़ ।।४।।

९. बारह मास

['बाराँ माह' का अर्थ है बारह महीने। 'बाराँ माह' लिखनेकी परम्परा पञ्जाबी कवियोंमें बहुत पुरानी है। इसमें बारहों महीने गिनाए जाते हैं और हर महीनेके वर्णनमें नायक या नायिकाके मनमें उठती हुई भावनाओंको व्यक्त किया जाता है। किन्तु अमृता प्रीतमने 'बाराँ माह' में परम्परासे विरुद्ध अभिव्यक्तिकी नई राह निकाली है। यह अनोखी नवीनता ही इस कविताकी विशेषता है।]

ओ कँटीले बबूल! चैतका महीना चढ़ गया है। सभी खेत जग गए हैं ॥१॥

ओ कँटीले बबूल! बैसाखका महीना चढ़ गया। साम्राज्यके मुखपर उड़-उड़कर राख पड़ रही है ॥२॥

ओ कँटीले बबूल! जेठका महीना आ गया। धरती तेरे नीचे अँगड़ाइयाँ ले रही है ॥३॥

ओ कँटीले बबूल! असाढ़का महीना चढ़ गया। घास-फूलका यह आच्छादन (झोपड़ी) कब तक बचेगा! ॥४॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
अग्गों चढ़या सौण,
दावानल है समय दी
रोक सके अज कौन ! ॥५॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
आदों है इस बेर,
बेलन बिच निपिडियां
छिल्ला उगियां फेर ॥६॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
अस्सूं चढ़या अज,
अज ना लारे लगदे
अज ना पैंदे पज ॥७॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
कत्तक बदले तौर,
नवे जुगा दे बुत विच
नवें लहू दा दौर ॥८॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
मग्घर चढ़या आन,
कोई इक पत्री लोहे दी
जीकण चड़ दी सान ॥९॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
अस्सों चढ़या मोह,
हक जिना दे आपने
आप लैंणगे खोह ॥१०॥

ओ कँटीले बबूल! सावन आ पहुँचा। क्रान्तिकी इस आगको कौन रोक सकेगा ॥५॥

ओ कँटीले बबूल! भादों इस बार आ गया। गन्ने पेरे गये और उनके छिलकोंके ढेर लग गए ॥६॥

ओ कँटीले बबूल! क्वारका महीना चढ़ गया। आज बहाने नहीं चलेंगे। आज सब हीला-हवाली बेकार होगी ॥७॥

ओ कँटीले बबूल! कार्तिक रंग बदल रहा है। नए युगकी मूर्तिमें नया रुधिर प्रवाहित हो रहा है ॥८॥

ओ कँटीले बबूल! अगहन आ पहुँचा। जैसे कोई लौह-खण्ड सानपर चढ़ा रहा हो ॥९॥

ओ कँटीले बबूल! पूसका महीना आ गया। अपने प्राप्यको अधिकारी स्वयं ही छीन लेंगे ॥१०॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
उत्तों चढ़्या माघ,
करन सवारी समें ते
फड़न समें दी वाग ॥११॥

किकरा वे कन्ड्यालया !
फग्गन चढ़्या आन,
लोकाँ दे इस जुग विच
लोक चढ़न पखान ॥१२॥

ओ कँटीले बबूल ! माघका महीना चढ़ गया। समय पर वही सवारी कर सकता है जो समयकी बागको (वल्गा) पकड़े रहे ॥११॥

ओ कँटीले बबूल ! फागुन महीना आ पहुँचा। जनताके इस युगमें जनताका कल्याण हो ! ॥१२॥

———

१०. चेतर

चेतर दा वणजारा आया
बुचकी मोढ़े चाई वे
असाँ विहाजी प्यार-कथूरी
वेंह्दी रही लुकाई वे ।।१।।

साडा वणजारा मुबारक सानूँ
कल हसदी सी जेहड़ी दुनियाँ
ओह दुनियाँ अज साडे कोलों
चुटकी मंगण आई वे ।।२।।

बिरहा दा इक खरल बल्लौरी
जिंदडी दा असाँ सुरमा पीठा
रोज़ रात नूं अम्बर आ के
मँगदा इक सलाई वे ।।३।।

दो अखियाँ दे पानी अन्दर
कल असाँ कुझ सुपने घोले
एह धरती अज साडे वेहड़े
चुन्नी रंगण आई वे ।।४।।

कख् काण दी झुग्गी साडी
जिंद दा मूढा कित्थे डाहिये
साडे घर अज याद तेरी दी
चिणग प्राहुणी आई वे ।।५।।

१०. चैत्र

कन्धेपर गठरी रखे हुए चैत्रका व्यापारी आया। हमारा व्यापार तो प्रेम-कस्तूरीका है। दुनियाके लोग उसे देखते रहे ॥१॥

हमारा व्यापार हमींको मुबारक रहे। जो दुनिया कभी हमपर हँसती थी, वही हमारे पास आज भिक्षा लेने आई है ॥२॥

मेरा विरह बिल्लौरी पत्थरसे बना हुआ एक खरल है, जिसमें मैंने अपना जीवन रूपी सुरमा पीसा है। प्रत्येक रात्रिको आकाश आ कर एक सलाई माँगता है ॥३॥

नेत्रोंके अश्रु-जलमें अपने सपने घोल दिए। हमारे आँगनमें धरती माता अपनी चुनरी रँगने आई है ॥४॥

हमारी कुटिया तो घास-फूसकी है। इसमें हम जीवन रूपी मोढ़ा कहाँ बिछाएँ। तुम्हारी स्मृतिकी चिनगारी लिये मैं बसेरा करने आई हूँ ॥५॥

साडी अग मुबारक सानूं
सूरज साडे बूहे आया
उसने अज इक कोला मँग के
आपनी अग सुलगाई वे ॥६॥

हमारी आग हमें मुबारक हो। हमारे द्वारपर सूरज आया। उसने एक एक अङ्गारा माँगा और फिर उसने अपनी आग सुलगाई। ।।६।।

११. ग़ज़ल

आ कि तैनू नज़र भर के
अज दो पल वेख लाँ
मौत है मनसूर दी
कितनी कु मुश्किल वेख लाँ ।।१।।

उम्र दी एस रात विच
इक होर सुपना लैंरण दे
आ कि दिल दे दर्द दी
इक होर मंज़िल वेख लाँ ।।२।।

आ कि थोड़ी देर तों
अखियाँ दा घर वीरान है
आ कि फिर लगदी किवें
हञ्जुआँ दी महफिल वेख लाँ ।।३।।

उम्र भर दी तड़प दा
जलवा असी तकदे पैये
होर केहड़ा ग़म हैं मेरे
दिल दे क़ाबिल वेख लाँ ।।४।।

ज़िंदगी दी प्राहुरण्चारी
वेख बैठे हाँ असी
मौत वी सददी बड़ा
हुरण जा के उस वल वेख लाँ ।।५।।

११. गज़ल

आ कि, तुझे आज नजर भरकर दो पल देख लूँ। मन्सूरकी मौत किस कदर मुश्किल थी, इसे देख लूँ ।।१।।

जीवनकी इस रातमें एक नया सपना देखने दे। आ कि, दिलके दर्दकी एक और मंजिल देख लूँ ।।२।।

आ कि, आँखोंका घर काफी देरसे वीरान है। आ कि, आँसुओंकी महफिल कैसी लगती है, इसको देख लूँ ।।३।।

हम उम्र भरकी तड़पका जलवा देख चुके। आ कि, मेरे दिलके काबिल और कौन-सा ग़म है, इसको देख लूँ ।।४।।

जिन्दगीकी पहुनाई हमने अच्छी तरह देख लिया। मृत्यु बार-बार पुकार रही है। अब चलकर उसको देख लूँ ।।५।।

१९. जाण वाले !

मुहब्बत कोई आदत ताँ नहीं
जो नवीं पै सक दी है
की कह सकदी हाँ इस तों सिवा
जाण वाले इंज ना जा ! ॥१॥

'तूँ मेरे जीवन दी लोड़ एं'
एह इक अन्न खान जितनी सचाई है।
पर एह गलमे आखाँ
ते फेर तूँ मनेगा इस नूँ ?
इतनी वड्ढी सचाई नूँ
चार हरफाँ दी गुलाम ना बना
जाण वाले इंज ना जा ॥२॥

'मैं तैनूँ प्यार करदी हाँ'
क्यों तैसा विश्वास मंगदैं
मेरे एह ना लफजाँ दा सहारा ?
विश्वास दी तली ते उमर दी लकीर
क्यों थां थां तों इंज टुट रिहै किनारा ?
मुहब्बत इक मौसम नहीं
जो आके गुजर जाएगा
जाण वाले इंज ना जा ! ॥३॥

३२. जानेवाले !

प्यार कोई आदत तो नहीं है जो बदली जा सके। इसके अतिरिक्त मैं और क्या कह सकती हूँ। ओ जानेवाले, इस प्रकार मत जा! ॥१॥

'तुम मेरे जीवनकी आवश्यकता हो', यह कथन उतना ही सत्य है जितना कि अन्न-भोजन। किन्तु यह बात अगर मैं तुझसे कहूँ तो तुम इसे मान लोगे! इतने महान् सत्यको चार शब्दोंका गुलाम न बना! ओ जानेवाले, इस प्रकार मत जा! ॥२॥

'मैं तुमको प्यार करती हूँ', तुम्हारा विश्वास मेरे इन शब्दोंका सहारा क्यों माँगता है? विश्वासकी हथेली पर (अंकित) आयुकी रेखा रह-रहकर जगह-जगहसे क्यों टूटते किनारेकी भाँति टूट रही है। प्यार एक मौसम तो नहीं है जो कि आकर फिर चला जाएगा। ओ जानेवाले, इस प्रकार मत जा! ॥३॥

मेरी टुट रही आवाज़
क्यों है तेरी मिहर मेरी मिनत दी मुहताज !
वफा नूँ की अज्ज वास्ता पाणा पवेगा ?
शायद मुशकल ही मिलदा है वफा दा सिला ।
कितने अरगवानी साल
मैं अण जाणियाँ हंगाल सुट्टे
कर दित्ते ने स्याह
अरमान उह्ना दे
तेरे ते तां मैंनूं कोई नहीं गिला
मेरी खता
पर हुण तेरी पनाह
मेरे औण वाले ! इंज ना जा ! ॥४॥

मेरी आवाज टूट रही है। तुम्हारी दया मेरी प्रार्थनाकी मुहताज क्यों बनी है! विश्वासको भी आज मिन्नत करनी पड़ेगी? शायद विश्वासका पुरस्कार बड़ी कठिनाईसे मिलता है। जीवनके कितने ही मधुर वर्ष मैंने अनजाने ही नष्ट कर दिए। उनके अरमानोंको काला कर दिया। तुझसे मुझे कोई शिकायत नहीं है। मुझसे खता तो हुई, लेकिन अब तेरी पनाह माँगती हूँ। ओ मेरे आनेवाले! इस प्रकार मत जा! ॥४॥

१३. पौन

दिल दी हर इक चिनग नूँ सुलगा रही
अज पौन मेरे शहर दी केहो जही!
शायद तेरा शहर छोह के आई है ॥१॥

हर साह एह दे होठाँ दा अज बेचैन है
अज हर मुहब्बत गुजरदी जिस राह तों
शायद ओसे राह तों हो के आई है ॥२॥

अज जापदी है सखनी कुझ एस तराँ
कुझ एस तराँ भरपूर है जीकन किते
एह फिर तेरे बूहे खलो के आई है ॥३॥

उँज ताँ गुज़री है सारी उम्र एस तराँ
पर जापदा है अज जिमें मेरी तराँ
इश्क दी कोई सिखर छोह के आई है ॥४॥

एह वक्त दी हर तपश नूँ अजमाँ चुकी
हुण एस तराँ निढाल है जीकन किते
इकल्ली बैठ के अज रो के आई है ॥५॥

दिल दी हर इक चिनग नूँ सुलगा रही
अज पौन मेरे शहर दी केहो जही!
शायद तेरा शहर छोह के आई है ॥६॥

११. पवन

आज मेरे नगरकी हवा दिलकी हर चिनगारीको कैसी सुलगा रही ! शायद वह तेरे नगरसे होकर आई है ।।१।।

इसकी हर साँस बेचैन-सी है । हर मुहब्बत जिस राहसे गुजरती है, शायद वह आज उसी रास्तेसे होकर आई है ।।२।।

यह मुझको रीती-सी लग रही है, कुछ भरी-सी भी प्रतीत हो रही है । लगता है यह तुम्हारे दरवाजे पर रुक कर आई है ।।३।।

यों उम्र तो इसी तरह गुजरी है, लेकिन आज लगता है कि यह भी मेरी तरह प्रेमकी किसी चोटीको छूकर आई है ।।४।।

यह समयकी हर जलनको सहन कर चुकी है । आज तो यह ऐसी निढाल पड़ी है कि लगता है कहीं अकेली बैठकर खूब रो करके आई है ।।५।।

आज मेरे शहरकी हवा दिलकी हर चिनगारीको कैसी सुलगा रही ! शायद वह तेरे नगरसे होकर आई है ।।६।।

१४. कलम दा भेत

जद कदे वी गीत मेरा कोई किधरे गाएगा
ज़िकर तेरा आएगा ।
तूं नहीं आया ! ।।१।।

छडुके छाँवाँ नूं जो राह्वां नूँ चुम्मेगा कोई
ओस नूं हर कदम मेरा नज़र औंदा जाएगा ।
तूँ नहीं आया ! ।।२।।

माण सुच्चे इश्क दा है, हुनर दा दावा नहीं
कलम दे इस भेत नूं कोई इलमवाला पाएगा ।
तूं नहीं आया ! ।।३।।

शुहरतां दी धूड़ डाढ़ी, धूड़ ऊझां दी बड़ी
रंग दिल दे ख़ून दा कोई किवें बदलाएगा ।
तूं नहीं आया ! ।।४।।

इश्क दी दहलीज ते सजदा करेगा जद कोई
याद फिर दहलीज नूं तेरा ज़माना आएगा ।
तूँ नहीं आया ! ।।५।।

जद कदे वी गीत मेरा कोई किधरे गाएगा
ज़िकर तेरा आएगा ।
तूं नहीं आया ! ।।६।।

१४. लेखनीका मर्म

जब कभी भी मेरा गीत कोई कहींपर गाएगा, तब तुम्हारा जिक्र आएगा । तू नहीं आया ! ।।१।।

जब कोई छायाको छोड़कर राहोंको चूमेगा उसको मेरा हर कदम दिखलाई देता जाएगा । तू नहीं आया ! ।।२।।

कलाके दावेका नहीं बल्कि सच्चे प्रेमका सम्मान होता है । लेखनीके (इस) मर्मको कोई ज्ञानवान ही समझ पाएगा । तू नहीं आया ! ।।३।।

ख्यातिकी धूल ढेरों है और लांछनकी धूल भी बहुत है । दिलके खूनका रंग कोई कैसे बदल सकता है । तू नहीं आया ! ।।४।।

जब कोई प्रेमकी देहलीपर मस्तक नवाएगा, तब फिर देहलीको मेरा जमाना याद आएगा । तू नहीं आया ! ।।५।।

जब कभी भी कोई मेरा गीत कहीं पर गाएगा तो तुम्हारा जिक्र आएगा । तू नहीं आया ! ।।६।।

१५. रात मेरी जागदी

तेरा ख्याल सौं ग्या !

सूरज दा रुख खड़ा सी
किरनाँ किसे ने तोड़ियाँ
एह् चन ता दा गोटा किसे
अम्बर तों अज उधेड़या ।।१।।

क्यों किसे दी नींद नूं
सुपने बुलाबा दे गए
तारे खलोते रह् गए
अम्बरने बूहा ढोल्या ।।२।।

ए ज़ख़्म मेरे इश्क दे
सीते सी तेरी याद नें
अज तोड़के टाँके असाँ
धागा बी तैनूं मोड़या ।।३।।

१५. मेरी रात जाग रही

[विज्ञान द्वारा आविष्कृत संहारक आयुधोंके निर्माणके कारण समूचा संसार एक शस्त्रागार बन गया है। शस्त्रोंकी झंकारके मध्य, तोपोंकी गड़गड़ाहटके बीच बाँसुरीकी सुरीली आवाज खो-सी गई है। चारों ओर फैला है विग्रह...कलह ...युद्धका विषाक्त वातावरण। इस परिस्थितिमें मानवताका दम घुटा जा रहा है। विश्वका प्रत्येक सम्वेदनशील व्यक्ति मानवताकी इस करुण अवस्थाको देखकर विचलित हो उठा है! अमृताजीका भी हृदय चीख उठता है—'कणक दी इक महक सी बारुदने अज पी लई!' (आह, आज बारूदने गेहूँकी प्यारी सुगन्ध पी डाली!) लेकिन अमृताजीके गीले नयन इस अन्धकारके बीचमें भी देखते हैं एक रोशनी; मानवताके उज्ज्वल भविष्यकी एक प्रकाश-रेखा भी!]

तेरा ख्याल सो गया !

सूरजका पेड़ खड़ा था। उसकी किरणोंको किसीने तोड़ डाला। आकाशके चन्द्रमा रूपी गोटेको आज किसीने उधेड़ डाला। ॥१॥

सपने क्यों किसीकी नींदको बुलावा दे गए। तारे खड़े क्यों रह गए और आकाशने द्वार क्यों बन्द कर दिया? ॥२॥

मेरे प्रेमके घावोंने तुम्हारी स्मृतिको सी डाला था, किन्तु आज मैंने उसके टाँकेको भी तोड़ डाला और धागेको तुझे लौटा दिया ॥३॥

कितनी कु दर्दनाक है
अज बीड़ मेरे इश्क दी
सभना उडीकाँ दा असाँ
पत्रा एहदे चों पाड़या ॥४॥

धरती दा हौका निकल्या
असमानने सिसकी भरी
फुल्लाँ दा सी इक काफला
तत्ते थलाँ चों गुजरया ॥५॥

कणक दी इक महक सी
बारूदने अज पी लई
ईमान सी इक अमन दा
ओट वी किते विकदा ण्या ॥६॥

दुनियाँ दे चानन नूं अजे
सदियाँ उलाम्भे देंदियाँ
एस प्यार दी रुत्ते तुसाँ
नफरत नूं कीकण बीजया ॥७॥

इन्सान दा एह खून है
इन्सान नूं पुच्छदा ण्या
ईसा दे सुच्चे होठ नूं
सूली ने कीकण चुम्याँ ॥८॥

एह किस तराँ दी रात सी
अज दौड़ के लंघी जदों
चन दा इक फुल सी
पैरां दे हेठाँ आ गया ॥९॥

आह, मेरे प्रेमका ग्रन्थ कितना दुखदायी है ! आज मैंने सभी स्मृतियोंके पृष्ठ अपने हाथोंसे फाड़कर फेंक दिए हैं ।।४।।

धरतीसे 'आह' निकली। आकाशने सिसकी भरी। फूलोंका एक काफिला जलती रेतपर चलता रहा ! ।।५।।

आह, आज बारूदने गेहूँकी प्यारी सुगन्ध पी डाली और शान्तिका विश्वास कहीं बिक रहा है ! ।।६।।

अभी धरतीके प्रकाशके लिए शताब्दियोंके ताने (व्यंग्य) हैं। बता, प्यारकी इस ऋतुमें घृणाका बीज कैसे बोया ! ।।७।।

मनुष्यका यह रक्त स्वयं मनुष्यसे पूछ रहा है—बता, सूलीने ईसाके पवित्र ओठको कैसे चूमा ! ।।८।।

यह रात कैसी रात थी, जब यह दौड़ती हुई बढ़ी तो इसके पैरोंके तले चाँदका यह कोमल फूल कुचल दिया गया ! ।।९।।

कितनी क्रु दर्दनाक है
अज बीड़ मेरे इश्क दी
सभना उडीकाँ दा असाँ
पत्रा एहदे चों पाड़या ।।४।।

धरती दा हौका निकल्या
असमानने सिसकी भरी
फुल्लाँ दा सी इक काफला
तत्ते थलाँ चों गुजरया ।।५।।

कणक दी इक महक सी
बारूदने अज पी लई
ईमान सी इक अमन दा
ओट वी किते विकदा ण्या ।।६।।

दुनियाँ दे चानन नूं अजे
सदियाँ उलाम्भे देंदियाँ
एस प्यार दी रुत्ते तुसाँ
नफरत नूं कीकण बीजया ।।७।।

इन्सान दा एह खून है
इन्सान नूं पुच्छदा ण्या
ईसा दे सुच्चे होठ नूं
सूली ने कीकण चुम्याँ ।।८।।

एह किस तराँ दी रात सी
अज दौड़ के लंघी जदों
चन दा इक फुल सी
पैराँ दे हेठाँ आ गया ।।९।।

आह, मेरे प्रेमका ग्रन्थ कितना दुखदायी है ! आज मैंने सभी स्मृतियोंके पृष्ठ अपने हाथोंसे फाड़कर फेंक दिए हैं ।।४।।

धरतीसे 'आह' निकली। आकाशने सिसकी भरी। फूलोंका एक काफिला जलती रेतपर चलता रहा ! ।।५।।

आह, आज बारूदने गेहूँकी प्यारी सुगन्ध पी डाली और शान्तिका विश्वास कहीं बिक रहा है ! ।।६।।

अभी धरतीके प्रकाशके लिए शताब्दियोंके ताने (व्यंग्य) हैं। बता, प्यारकी इस ऋतुमें घृणाका बीज कैसे बोया ! ।।७।।

मनुष्यका यह रक्त स्वयं मनुष्यसे पूछ रहा है—बता, सूलीने ईसाके पवित्र ओठको कैसे चूमा ! ।।८।।

यह रात कैसी रात थी, जब यह दौड़ती हुई बढ़ी तो इसके पैरोंके तले चाँदका यह कोमल फूल कुचल दिया गया ! ।।९।।

सूरज दा घोड़ा हिसाक्या
चानन दी काठी लैह पई
उम्राँ दे पैडें मारदा
धरती दा पाँधी रो प्या ॥१०॥

एह रात क्यों अज ग्रह गई
कालख है कुझ कम्बदी पई
किधरे किसे विश्वास दा
शायद टटैहनां चमक्या ! ॥११॥

राताँ दी अख फड़क दी
एह खौरे चंगा सगन है
अम्बर दी उच्ची कन्ध ते
चानण दा तीला लिश्क्या ॥१२॥

की करे टहनीं कोई
फुल्लाँ दी ममता मारी
इन्सान दी तकदीर ने
इन्सान नूं अज आख्या : ॥१३॥

हुस्ना ते इश्काँ वाल्यो
जाओ-ल्यावो मोड़ के
विश्वास दा इक जात्रू
जित्थे किधरे टुर गया ॥१४॥

———————

सूरजका घोड़ा हिनहिनाया । उज्ज्वल काठी नीचे गिर गई । युगोंसे मंजिल तय करता हुआ धरतीका राही रो पड़ा ।।१०।।

यह रात भयभीत होकर बिदक क्यों गई ? अँधेरा भी क्यों काँप रहा है ? शायद कहीं पर किसी विश्वासका जुगुनू चमक उठा है ! ।।११।।

रातकी आँख फड़क रही है । यह शुभ शकुन है । अम्बरकी ऊँची दीवारसे रोशनीका तिनका चमक रहा है ।।१२।।

बेचारी शाखा क्या करे, जब फूलोंकी ममता ही मारी गई ! मनुष्यके भाग्यने मनुष्यसे यह कहा ..... ।।१३।।

सौन्दर्य एवं प्रेमके मतवालो ! जाओ, विश्वासके यात्रीको वापस लौटा लाओ ! ढूंढ़ो, वह कहाँ चला गया है ? ।।१४।।

---

१६. माइआ

[प्रसिद्ध चित्रकार विनसैण्ट वानगौग दी कल्पित प्रेमिका माइआ नूँ !]

परिये नीं परिये !
हूरां शाहज़ादिये !
गोरिये विनसैंट दिये !
सच्च क्यों बणदी नहीं ? ।।१।।

हुसन काहदा, इश्क काहदा
तूँ कही अभिसारका ?
आपणे किसे महिबूब दी
आवाज तूँ सुणदी नहीं ।।२।।

दिल दे अन्दर चिणग पाके
साह जदों लैंदा कोई
सुलगदे अंगियार कितने
तूँ कदे गिणदी नहीं ।।३।।

काहदा हुनर, काहदी कला
तरला है इक एह जिउण दा
सागर तखइयल दा कदे
तूँ कदे मिणदी नहीं ।।४।।

परिये नीं परिये !
हूरां शाहज़ादिये !
ख्याल तेरा पार ना——
[illegible] है ।।५।।

१६. माया

[प्रसिद्ध चित्रकार विनसैण्ट वानगौग की कल्पित प्रेमिका मायाको]

परी, ओ परी ! ओ हूरों-सी शाहजादी ! ओ विनसैण्टकी गोरी ! तू सत्य क्यों नहीं बनती ? ।।१।।

तुम्हारा सौन्दर्य कैसा है ! तुम्हारा प्रेम कैसा है ! तू कैसी अभिसारिका है कि तू अपने किसी प्रेमीकी आवाज नहीं सुनती ! ।।२।।

जब हृदयमें चिनगारी-सी कोई चीज प्राप्त कर कोई श्वास लेता है तो उसमें कितने अंगारे सुलगते हैं, उनको तू कभी गिनती नहीं है ।।३।।

कैसा हुनर ! कैसी कला !! जीनेका एक बहाना है। कल्पनाके सागरको तू नापती नहीं है ! ।।४।।

परी, ओ परी ! ओ हूरों-सी शाहजादी ! तुम्हारे ख्यालकी कोई हद नहीं है। ।।५।।

रोज सूरज ढूँडदा है
मुँह किते दिस्सदा नहीं
मुँह तेरा जो रात नूँ
इकरार वेंदा है ।।६।।

तड़प किसनूँ आखदे ने
तूँ नहीं एह जाणदी
क्यों किसे तों जिन्दगी
कोइ वार देंदा है ।।७।।

दोवें जहान आपणे
लाँदा है कोई खेड ते
हस्सदा है ना मुराद
ते फिर हार देंदा है ।।८।।

परिये नीं परिये!
हूरां शाहज़ादिये!
लक्खाँ खयाल इस तराँ
औणगे, टुर जाणगे ।।९।।

अरगवानी ज़हिर तेरा
रोज कोई पी लवेगा
नक्श तेरे रोज़ जादू
इस तराँ कर जाणगे ।।१०।।

हस्सेगी तेरी कल्पना
तड़फेगा कोइ रात भर
सालां दे साल इस तराँ
इस तराँ, खुर जाणगे ।।११।।

तुम्हारा मुख—जो रातको इकरार देता है—सूरज रोज उसको ढूंढ़ता है, लेकिन वह दिखाई नहीं देता ।।६।।

तड़प किसे कहते हैं, तू इसको नहीं जानती और न तू यह ही जानती है कि कोई किसी पर अपनी जिन्दगी क्यों वार देता है ? ।।७।।

दोनों लोक (लोक-परलोक) कोई क्यों दाँवपर लगा देता है और फिर निस्पृह होकर क्यों हँसता है तथा अपना सब कुछ क्यों हार जाता है ? ।।८।।

परी, ओ परी ! ओ हूरों-सी शाहजादी ! लाखों ख्याल इस तरहसे आएँगे और चले जाएँगे ।।९।।

तुम्हारा हलाहल-सा जहर कोई रोज पीता रहेगा और तुम्हारा रूप इस तरह रोज जादू करता जाएगा ।।१०।।

तुम्हारी कल्पना हँसेगी और कोई रात भर तड़पता रहेगा। ऐसे ही, ऐसे ही कितने वर्ष निकलते जाएँगे ! ।।११।।

हुनर भुक्खा, रोटिये !
प्यार भुक्खा, गोरिये !
कितने कु तेरे वानगौग
इस तराँ मर जाणगे ।।१२।।

परिये नीं परिये !
हूराँ शाहज़ादिये !
हुस्न कहा दी खेड है
इश्क जद पुगदे नहीं ।।१३।।

रात है काली बड़ी
उमराँ किले वे वाल्लियाँ
चन्न सूरज कहे दीवे
अजे वी जगदे नहीं ।।१४।।

बुत्त तेरा सोहणियें !
ते इक्क सिट्टा कणक दा
काहदियाँ एह धरतियाँ
अजे वी उगदे नहीं ।।१५।।

हुनर भुक्खा, रोटिये !
प्यार भुक्खा, गोरिये !
काहदा है रुख निज़ामदा
फल कोई लग्गदे नहीं ।।१६।।

ओ रोटी, हुनर भूखा है ! ओ गोरी, प्यार भूखा है ! भला, कितने वानगौग इस तरह मरते जाएँगे ! ।।१२।।

परी, ओ परी ! ओ हूरों-सी शाहजादी ! सौन्दर्यका खेल कैसा ? जब कि प्रेम विजयी न हो ।।१३।।

बड़ी काली रात है ! किसीने उम्र जला दी है। चाँद-सूरज कैसे दीप हैं जो अभी भी नहीं जलते ! ।।१४।।

ओ रूपसि, यह कैसी जमीन है कि जिसपर अनाजकी एक बाली भी नहीं उगती ।।१५।।

ओ रोटी, हुनर भूखा है ! ओ गोरी, प्यार भूखा है !! यह शासनका कैसा वृक्ष है, जिसमें फल नहीं लगते !।।१६।।

———

१७. मैं गीत लिखदी हाँ !

में गीत लिखदी हाँ
मेरी मुहब्बत, सुपनियां दे
लख्ख पल्ले उड़दी
सत्ते आकाश फोल के
तेरी दहलीज ढूंडदी ।।१।।

हद्दा दीवारां, दूरियाँ
ते हक नहीं कुझ कूण दा
ढूँडदी है जिन्दगी फिर
इक बहाना जीऊन दा
में गीत लिखदी हाँ ! ।।२।।

उमर भर दी आरजू है
उमर भर दे ग़म दा राज
सोचदी हाँ शायद कोई
बन जाए मेरी आवाज ।।३।।

बन जाए आवाज मेरी
अज जमाने दी आवाज
मेरे ग़म दे राज अन्दर
बस जाए दुनिया दा राज ।।४।।

इश्क है नाकाम मेरा
रह जाए नाकाम एह
सोचदी हाँ, दे जाए पर
इक मेरा पैगाम एह ।।५।।

१७. मैं गीत लिखती हूँ !

मैं गीत लिखती हूँ । मेरी मुहब्बत स्वप्नोंके अञ्चलको ओढ़कर बार-बार उड़ती है और सातों आसमान खोजकर तुम्हारी देहली ढूंढ़ती है ।।१।।

आज जिन्दगीमें सीमाएँ हैं, दीवारें हैं, दूरियाँ हैं । लेकिन कुछ बोलनेका अधिकार नहीं है । आज जिन्दगी फिर जीनेका एक बहाना ढूंढ़ रही है । मैं गीत लिखती हूँ ! ।।२।।

उम्र भरकी आरजू है और उम्र भरका दुःख का राज्य ! सोचती हूँ कि शायद कोई मेरी आवाज बन जाए ! ।।३।।

मेरी आवाज जमानेकी आवाज बन जाए और दुनियाका राज्य मेरे दुःख के राज्यमें बस जाए ! ।।४।।

मेरा प्रेम व्यर्थ रहा । ठीक है वह व्यर्थ ही रहे । लेकिन मैं सोचती हूँ कि वह दुनियाको अपना एक पैगाम दे जाए ।।५।।

गीत मेरे ! कर दे मेरे
इश्क दा करजा अदा
तेरी हर इक सतर चों
आवे जमाने दी सदा ।।६।।

मेरी मुहब्बत दे चिराग
एह सिहाईयाँ बदल दे
गीत मेरे खून दे
एह जार-शाहियाँ बदल दे ।।७।।

फिर किसे दी आबरू दा
फिर किसे दे प्यार दा
फेर सौदा ना करे
सिक्का किसे जरदार दा ।।८।।

फिर कनक दे पालका नूं
लाम न सद्दे कोई
फिर जवानी उठदी नूं
पैर ना मिद्धे कोई ।।९।।

धरत आबर साड़नी
फिर अग ना भड़के कोई
फेर दोघे दानियाँ ते
जहर ना छिड़के कोई ।।१०।।

कतल गाहाँ दी कहानी
फिर कोई दोहराये ना
फिर किसे दा हुसन, मंडी
विच बुलाया जाए ना ।।११।।

ओ मेरे गीत, तू आज मेरे प्रेमके ऋणको चुका दे । तेरी हरेक पंक्तिमें जमाना बोल उठे ।।६।।

मेरे प्रेमके दीप, कालिमाओंको दूर कर दे । मेरे गीत ! मेरे लहूके गीत ! जारशाहीको बदल दे, ताकि.... ।।७।।

फिर किसी धनवानका सिक्का किसीके प्यारके साथ, किसीकी आबरूके साथ सौदेबाजी न कर सके ।।८।।

फिर कोई युद्ध गेहूँके पालकोंको लील न जाए । फिर किसीके पैर उभरती हुई जवानीको मसल न सकें ! ।।९।।

धरती–आकाशको जला देनेवाली फिर कोई आग भड़क न उठे और दूधिया दादोंके ऊपर कोई जहर न छिड़क सके ! ।।१०।।

फिर कोई कतलगाहोंकी कहानी दुहराने न पाए । फिर किसीका सौन्दर्य मण्डीमें बुलाया न जा सके ! ।।११।।

हसरतां अजमादियाँ ने
फिर कलम दे जोर नूं
मैं गीत लिखदी हाँ !
कि हसरता दे गीत फिर
लिखने ना पैण होर तूं
मैं गीत लिखदी हाँ ! ॥१२॥

हसरतें आज फिर कलमकी ताकतकी आजमाइश कर रही हैं। मैं गीत लिखती हूँ, ताकि फिर और किसीको हसरतोंके गीत न लिखने पड़ें! ॥१२॥

---

१८. दावत

रात कुड़ीने दावत दित्ती
तारे जीकण चौल छंड़ी दे
किसने देगां चाढ़ीयां ? ॥१॥

किसने आंदी चन्न सुराही
चानण घुट्ट शराब दा, ते
अम्बर अक्खां गाढ़ीयां ॥२॥

धरती दा अज दिल पिया धड़के
मैं सुणियाँ अज टाहिणां दे घर
फुल्ल प्राहुणे आए वे । ॥३॥

इसदे अग्गों कीहि कुझ लिखिया
हुण एन्हां तकदीरां कोलों
किहड़ा पुच्छण जाए वे ॥४॥

उमरां दे इस कागज उत्ते
इश्क तेरे अँगूठा लाया
कौण हिसाब चुकाएगा ॥५॥

किस्मतने इस नग़मा लिखिया
कहिं दे ने कोई अज्ज रात नूँ
ओहियो नग़मा गाएगा ! ॥६॥

कलप बिच्छ दी छावें बहिके
कामधेनु दा दुद्ध पसम्मिया
किसने भरीयां दोहणियां ! ॥७॥

किहड़ा सुणे हवा दे हौके
चलनीं जिदे चलिए—सानूं
सद्दण आइयां होणिया ! ॥८॥

१८. दावत

निशा-सुन्दरीने दावत दी है। चावल जैसे तारे छँटते जा रहे हैं। किसने देग चढ़ाई है? ॥१॥

कौन चाँद रूपी सुराही लाया है? चाँदनी रूपी शराबको पानकर अम्बरकी आँखें गाढ़ी हो गई हैं—उन्मादसे भरी हैं! ॥२॥

आज धरतीका हृदय धड़कता है। मैंने सुना है कि शाखोंके घर आज फूल पाहुने आए हैं। ॥३॥

इसके बाद क्या और भी कुछ लिखा है! बताओ, इन भाग्योंसे अब कौन पूछने जाए! ॥४॥

उम्रके इस कागजपर तुम्हारे प्रेमने अँगूठा लगाया है, अपनी सही कर दी है। इस प्रेमका कौन हिसाब चुकाएगा? ॥५॥

भाग्यने एक गीत लिखा था। कहते हैं आज रातको कोई उसी गीतको गाएगा! ॥६॥

कल्प-वृक्षकी छायामें बैठकर किसने कामधेनुका दूध पँवासा? किसने दोहनियाँ भर दी हैं? ॥७॥

पवनकी आहें कौन सुनने जाए! चल रे जीवन, चलें! हमें भाग्य बुलाने आया है! ॥८॥

---

१९. आवाज

दर ना भीड़ हयातिये !
रख सिदक दी लाज
रेत थलाँ विच आ रही
कदमा दी आवाज़ ।।१।।

दर ना भीड़ हयातिये !
अजे ना मुक्का पन्ध
सूरज धूड़े चाँणनाँ
धरती मले सुगन्ध ।।२।।

दर ना भीड़ हयातिये !
पल कु होर उडीक
लख हनेरे चीरदी
चाँणन दी इख लीक ।।३।।

दर ना भीड़ हयातिये !
वेख ज़रा इक वेर
मत्थे किरणा बन के
सूरज आया फेर ।।४।।

दर ना भीड़ हयातिये !
वेख ज़रा कु ठहर
कासा फड़या इश्क ने
जिन्दड़ी पा दे खै़र ।।५।।

---

१९. आवाज़

ओ लजीली ! द्वार मत बन्द कर। सब्र की लाज रख ले। रेगिस्तानोंसे कदमोंकी आवाज आ रही है ।।१।।

ओ लजीली ! द्वार मत बन्द कर। अभी मंजिल कहाँ मिली। सूरज गुलाल उड़ा रहा है ! धरती सुगन्ध-स्नान कर रही है ! ।।२।।

ओ लजीली ! द्वार मत बन्द कर। पल भर प्रतीक्षा कर ले। लाख अँधियारेको चीरती हुई उस उज्ज्वल लकीरको देख !।।३।।

ओ लजीली ! द्वार मत बन्द कर। जरा एक बार देख। सूरज किरणोंका सेहरा पहने एक बार फिर आया है ! ।।४।।

ओ लजीली ! द्वार मत बन्द कर। ओ नादान, जरा ठहर। प्रेम झोली फैलाये आया है, इसे जीवन-दान दे दे ।।५।।